प्रस्तावना।

इस ग्यारह वर्ष पूर्व श्रीयुत महेश प्रकाशदेव ने उर्दू में एक जीवन-चरित मुहम्मद साहब का लिखा था, उसकी बहुत प्रतिष्ठा हुई। उसके कई संस्करण भी निकल चुके। यहाँ तक कि मुसलमानों ने भी उसे अपने बालकों के लिये पढ़ने को मँगाया। यह पुस्तक भी उसी के आधार पर लिखी गई है। परन्तु इसमें बहुत कुछ परिवर्त्तन करना पड़ा है। इसमें दो एक परिच्छेद नये मिलाये गये हैं ताकि पाठकगण इसके पढ़ने के बाद 'मुहम्मद और इस्लाम' नामक पुस्तक से इसका तार मिला सकें जो कि शीघ्र ही प्रकाशित होगी।

मुहम्मद साहब का जीवन अत्यन्त सरल जीवन है। मृत्यु-समय जो जायदाद वे छोड़ गये थे वह भी अत्यन्त साधारण थी; एक मिट्टी का बर्तन, एक ग्लास और खजूर की एक चटाई। परन्तु यह तो सांसारिक जायदाद थी, यथार्थ में मुहम्मद साहब ने अपने नैतिक बल से एक ऐसी ज़बर्दस्त क़ौम तय्यार की है जिसका प्रभाव संसार के इतिहास पर आज पड़ रहा है,

पूर्व में पड़ चुका है और भविष्य में ख़ास कर भारतवर्ष के इतिहास में जिसका परिणाम बड़े महत्व का होगा। राष्ट्र-निर्माण से बढ़कर कोई भी श्रेष्ठ कार्य संसार में नहीं है और यह कार्य बड़ी योग्यता के साथ मुहम्मद साहब ने पूर्ण किया। उनके सामने इस कार्य के लिये बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ मौजूद थीं। अरब देश की अज्ञानता प्रसिद्ध थी। उनमें फूट का विष-वृक्ष जम चुका था—जिससे उनके लड़ाकूपन की धूम चारों ओर मची हुई थी। परन्तु इन सब कठिनाइयों पर विजय पाकर उन्होंने एक सहस्र वर्ष तक मुसलमानों के हाथ में पृथ्वी के मुख्य-मुख्य भागों की बागडोर दी और संसार के इतिहास में उनको अमर कर दिया।

इस जीवन-चरित के प्रकाशित होने से, हमारे हिन्दी-पाठकों को उनके चरित्र का ज्ञान होगा, और मुसलमान भाइयोंको भी मालूम होगा कि हम अपने साहित्य में उनकी पुस्तकों को मान देनेको तय्यार हैं। अन्यत्र हिन्दी कुरान छप चुकी है। और कुछ ग्रन्थ अन्य भी इनके धर्म और साहित्य के विषय में हमारी भाषामें मौजूद हैं।

इस जीवन-चरित में यदि अरबिस्तान की दशा, वहाँ के पूर्व-प्रचलित धर्म का हाल, वहाँ की कुरीतियाँ, मुहम्मदसाहब दार्शनिक थे या साधारण धर्म-प्रचारक, उनके धर्म को दार्शनिक रूप कब मिला, अरब की मूर्तिपूजा का विशेष हाल, इत्यादि-इत्यादि बातों का उल्लेख और होता तो पुस्तक और भी अधिक

रुचिकर होती,—यह मेरे एक मित्र का उपदेश है। मैं ऐसा अवश्य करता, परन्तु "मुहम्मद और इस्लाम" नामक पुस्तक में ये सब विषय विस्तृत रूप से लिखे जावेंगे, इसीलिये मैं उन्हें यहाँ रखना ठीक नहीं समझता।

अन्त में, मैं अपने मित्र श्रीयुत गणेशनारायणजी मिश्र, अध्यापक, को धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकता जिन्होंने इसका उचित संशोधन करके इसे आदि से अन्त तक अपने हाथों से लिखा। शुद्ध कापी करने का काम बड़ा कठिन है; परन्तु आपने उसे पूरा करही डाला। इसी कारण यह पुस्तक इतनी जल्दी प्रेसमें दिये जाने योग्य हो सकी। मैं उनकी इस कृपा के लिये अत्यन्त आभारी हूँ—

छिन्दवाड़ा सी० पी०
१५—१—१७

व्रजमोहनलाल वर्म्मा।

मुसलमानों का कर्मकाण्ड
और
उनका सामाजिक बन्धन।

मुहम्मद साहब इस्लाम धर्म के प्रवर्तक हैं। उन्हीं के अनुयायियों को मुसलमान कहते हैं। इसका साधारण अर्थ यह है कि, ईमान का पक्का मनुष्य मुसलमान कहलाता है। आजदिन भी टर्की, ऐशिया माइनर, मिश्र, अरब, फारिस, अफ़ग़ानिस्तान, चीनका कुछ अंश, भारतवर्ष, जावा, मलाया, लकाद्वीप इत्यादि देशों में अथवा द्वीपों में इस्लाम धर्म फैला हुआ है। भारतवर्ष को छोड़, जहां पर अधिकांश हिन्दू बसते हैं, शेष प्राय: ऊपर लिखे सभी देशों में मुसलमान ही रहते हैं। इनकी समूह-शक्ति या संघ-शक्ति २० करोड़ मनुष्यों की है। ये सब मुहम्मद साहब को खुदा का भेजा हुआ रसूल या पैग़म्बर मानते हैं। ये एक ईश्वर पर विश्वास करते हैं। ये स्वर्ग नरक को भी मानते हैं। ये अपनी सभ्यता हिन्दुओं के समान बहुत पुरानी बतलाते हैं और मुहम्मद साहब को

आखिरी पैग़म्बर मानते हैं। इनके पहिले हुए हज़रत जिब्रईल, हज़रत इस्राईल, हज़रत मूसा और हज़रत ईसा भी इनकी दृष्टि में पूजनीय हैं।

मुहम्मद साहब के हृदय में दो इच्छायें प्रधान थीं। एक तो यह कि उनके धर्म में आये हुए लोग एक ईश्वरको मानें, जिसका कि कोई सानी (मुक़ाबला करनेवाला) नहीं है; दूसरे वे एक दूसरे से मिलकर रहें। आज दिन तक मुसलमान लोग अपने पैग़म्बर की इन आज्ञाओं का पालन करते आये हैं।

ज्यों-ज्यों इस्लाम धर्म दूर-दूर फैलता गया, त्यों-त्यों भिन्न-भिन्न जातियाँ उसमें शामिल होने लगीं। शेख़, सय्यद, मुग़ल, पठान ये भेद बाद के हैं; इनसे और जाति-विचार से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह भेद उनके एक होने में बाधा भी नहीं देता। इनमें धार्मिक दृष्टि से मुख्य दो भेद हैं। एक शिया; दूसरे सुन्नी। इस भेद-भाव की उत्पत्ति अरब में हुई और यह भारतवर्ष तक भी बराबर चला आया है। ईसा की छठवीं सदी से १७०० ईसवी के बीचमें—भारतवर्ष से लेकर चीन तक और अरब से स्पेन तक—इन्होंने राज्य किया है। इन सबका विस्तृत वर्णन मैं अपनी 'मुहम्मद और इस्लाम' नामक पुस्तक में करूँगा। इस समय, मुहम्मद साहब के जीवन-चरित को पढ़ने वालों के लिये, मुसलमानों के कर्मकाण्ड का संक्षिप्त वर्णन् करना उचित समझा गया है।

मुसलमान जाति में ऊँच नीच अथवा बड़े छोटे का कोई भी विचार नहीं है। इस्लामधर्म के प्लेटफार्म पर यह सब बराबर हैं।, इनके यहाँ स्त्रियों के अधिकार भी सुरक्षित हैं। स्त्रियों को इस्लामधर्ममें अधिक स्वतन्त्रता है। स्त्री पुरुष दोनों के अधिकार भी बराबर हैं। मुसलमानोंमें एकता का अंकुर बड़ी दृढ़ता के साथ ज़ोर पकड़ चुका है और भविष्य में उसके बढ़ने की भी आशा है। इसी एकता के बल से उन्होंने सैकड़ों वर्षों तक अन्य देशों पर अपनी विजय-पताका फहराई। इनकी उन्नति का अथवा इनके सुख का एक मात्र कारण इनकी एकता है।

अन्य जातियों के समान इनके यहाँ भी त्योहार मनाये जाते हैं। इनके मुख्य त्योहारोंमें से कुछ के नाम ये हैं,— ग्यारहवीं शरीफ़, रमज़ान शरीफ़, मुहर्रम, बकरीद, शबरात और बारावफ़ात। ग्यारहवीं शरीफ़ हज़रत गौर अब्दुल कादिर जीलानी की स्मृति में होता है। यह माह रबी-उस्सानी में मनाया जाता है। रमज़ान शरीफ़ इनके यहाँ सब से पवित्र त्योहार है। रमज़ान के महीने की पहिली तारीख़ से यह शुरू होता है। रोज़े इन्हीं दिनों रखे जाते हैं। इससे इनलोगों का आशय यह है कि, अमीर इस बातको समझ जावें कि भूख, प्यास, अथवा गरीबी किसे कहते हैं।, इसमें इबादत (प्रार्थना) करने का ख़ूब अवसर मिलता है। मनुष्य का स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है। रमज़ानके महीने में रोज़ शाम

को मुसलमान 'तरावी'—या बीस रक़ात नमाज़ पढ़ते हैं। २७ वीं रात को इनकी नमाज़ ईश्वर स्वीकार करता है। उस रात को फ़रिश्ते आस्मान से ज़मीन पर आते हैं। वे लोगों को देखते हैं कि वे क्या कर रहे हैं। इनकी पुस्तकों में लिखा है कि पहले मनुष्य की अवस्था हज़ार वर्षों की हुआ करती थी। इतने समय तक प्रार्थना करने से स्वर्ग की प्राप्ति होती थी। ऐसे समय में मुहम्मद साहिबसे पूछा गया कि ऐ रसूल! अब तो सब की बहुत कम उम्र होगी। इनके लिये स्वर्ग पाने का कौनसा मार्ग है? उसी समय उनपर जिब्राइलका सूरह आस्मान से उतरा। जिसको "इन्ना—अन ज़ालना" कहते हैं। इसने उपदेश दिया कि अब एक रातमें ही लोगों की प्रार्थना स्वीकार होगी और धार्मिक लोग स्वर्ग को पायेंगे। बीसवें रोज़ ईद का पवित्र त्योहार मनाया जाता है। उसमें सब मुसलमान मस्जिद में एकत्रित होते हैं। पहिले ग़रीबों को ख़ैरात दी जाती है। लिखा है कि फी आदमी अढ़ाई सेर अनाज देना चाहिये। इसके बाद नमाज़ पढ़ी जानी चाहिये। अढ़ाई सेर अनाज ग़रीबों को दानदेने का असली मतलब यह है कि जब अमीर लोग नमाज पढ़कर घर जावें और अच्छा भोजन करें तब ग़रीबों को भी अवसर मिले कि वे भी वह दिन अच्छी तरह काट सकें।

बकरीद के त्योहार में भी प्राय: इसी प्रकारकी नमाज़ होती है। बकरीद में क़ुर्बानी या बलिदान करना महापुण्य

माना जाता है। यह त्योहार मुहम्मद साहब के आने के पहिलेसे ही अरब देशमें जारी था। कुर्बानी एक प्राचीन रस्म है, जो बौद्ध और जैन धर्म को छोड़ प्राचीनकाल में सब जगह फैली हुई थी। मनुष्यों का बलिदान, पशु पक्षियों अथवा पुत्र पुत्रियों तक का बलिदान प्राचीन लोगों में होता था। नरमेध से पशुमेध की तबदीली या परिवर्तन को बताने में मुसलमानों की कुर्बानी की रस्म भी एक ऐतिहासिक घटना अपने में रखती है। एक दिन रातको हज़रत इब्राहीमने यह स्वप्न देखा कि तू कुर्बानी कर। उन्होंने दो तीन रोज़ तक ऊँटों की कुर्बानी की, परन्तु स्वप्न बन्द न हुआ। अन्तमें आज्ञा हुई कि कुर्बानी में सब से प्यारी वस्तु का त्याग कर। उनके केवल एक ही पुत्र था। इसका नाम हज़रत इस्माइल था। इसकी कुर्बानी करने को वह तय्यार हो गये। अपनी स्त्री से जाकर सब हाल कहा। उसने भी खुदा के नाम पर अपने इकलौते बेटे की कुर्बानी करने की आज्ञा देदी। हज़रत इब्राहीम जंगल में गये। साथ में लड़के को भी ले गये। लड़के ने कहा कि ऐ पिता, तुम अपनी आँखें बन्द करलो। पुत्र-प्रेम बड़ा ज़बर्दस्त प्रेम है। कहीं ऐसा न हो कि तुम धर्म-पथ से हट जाओ। उन्होंने अपने नेत्रों पर पट्टी बाँध ली और पुत्र के हाथ पैर बाँध कर वे उसके गले पर छुरी फेरने लगे। इतने में खुदा की आज्ञा हुई कि ऐ इब्राहीम! तूने तो यह सच कर दिखलाया। इस पर बहिश्त से एक दुमदार जानवर

(बकरी या गाय) भेजा गया। हज़रत इब्राहीम यह जानते थे कि वे अपने लड़के को ही क़ुर्बानी कर रहे हैं। अन्त में जब उन्होंने आँख खोली तो देखा कि उनका लड़का तो पीछे खड़ा है और एक दुम्बा मरा पड़ा है। उन्होंने उसका मांस सारे नगर में बटवा दिया। इसी रूढ़ी पर आज दिन तक बकरीद का उत्सव मनाया जाता है। इसमें भी पहिले नमाज़ के बाद क़ुर्बानी होती है। चाँद देखने के दस दिन बाद यह त्योहार मनाया जाता है (यहाँ प्रति वर्ष कहीं न कहीं इसी त्योहार पर हिन्दू-मुसलमानों में, जिन्हें यहीं साथ रहना, जीना और मरना है बहुत बुरे झगड़े पैदा होते हैं। प्रत्येक मनुष्य को अपनी धार्मिक आज्ञा का पालन करना ज़रूरी है, परन्तु अपने पड़ोसी को किसी प्रकारका कष्ट न हो—इसका भी ख्याल रखना चाहिये। हिन्दू गो-वध के इतने विरुद्ध क्यों हैं और वे गाय बैल को इतनी श्रद्धा से क्यों देखते हैं—इसका एक मात्र कारण यह है कि यह खेती-प्रधान देश है और बिना खेती के जो दशा हिन्दुओं की होती है वही मुसलमानों की। कम से कम इतना ख्याल तो हिन्दुओं के विषय में मुसलमानों को अवश्य होना चाहिये। हिन्दुओं के चिढ़ाने के बहाने, प्रति दिन नये-नये क़स्साब-ख़ाने खोलना और लाखों करोड़ों मन कच्चा चमड़ा विलायत भेजकर, आगे के लिये हिन्दू-मुसलमानों दोनों की सन्तानों के लिये उजाड़ देश छोड़ना

जहाँ छापिका प्रबन्ध न हो सके, यह कभी भी तारीफ़ का काम न कहावेगा।)

इनका तीसरा त्योहार मोहर्रम है। यह मातमी त्योहार है। ८ वीं तारीख़ तक इसमें मातम (मृत्यु-शोक) है। परन्तु दसवीं को इसे शुभ पर्व मानते हैं। इसी दिन अली और हसन शहीद हुए थे। यह त्योहार भी बहुत पहिले से चला आता है। दसवीं तारीख़ मोहर्रम की बहुत शुभ तिथि है। इसी दिन हज़रत इब्राहीम आग से बचे थे। इसीदिन हज़रत मूसा को पैग़म्बरी मिली थी। इसीदिन हज़रत ईसा आसमान पर चढ़ाये गये थे। इसी दिन हज़रत यूनिस मछली के पेट से निकाले गये थे। इसी दिन हज़रत इमाम ज़ख़्मों से अच्छे हुए थे। इसी दिन हज़रत इमाम शहीद हुए थे। इसलिये यह त्योहार भी बड़े महत्व का माना जाता है। भारतवर्ष में मुसलमान लोग ताजिये बनाते हैं। वे १० वें दिन किसी नदी या तालाब में डुबा दिये जाते हैं या किसी इमामबाड़े में रखा दिये जाते हैं।

शबरात का त्योहार पन्द्रहवीं रात को होता है। इसका आरम्भ मुहम्मद साहब के समय से ही है। अहद की लड़ाई में मुहम्मद साहब के दो दाँत टूट गये थे। उनके एक भक्त हज़रत ओवैसकरनी ने भी, जिन्हें आशिक़-रसूल कहते हैं, अपने दो दाँत तोड़ डाले थे। परन्तु उनको यह नहीं मालूम था कि उनके कौन से दाँत टूटे थे। इसलिये दो दो करके

उन्होंने अपने सब दांत तोड़ डाले। मुँह उनका स्वाभाविकतः सूज गया। उस रात्रि में उनको हलुआ खिलाया गया था। इस रात्रि को यहाँ भी यह होता है। नमाज़ के बाद लोगों को हलुआ खिलाया जाता है।

बारा वफ़ात—यह मुहम्मद साहब के जन्म-दिन अथवा मृत्यु-दिन का त्योहार है। मुहम्मद साहब जिस तिथि को पैदा हुए थे उसी दिन मरे भी थे। उनकी स्मृति में यह त्योहार मनाया जाता है।

प्रत्येक सप्ताह में मुसलमानों के यहाँ दो दिन बहुत पवित्र माने जाते हैं। एक शुक्रवार (जुम्मा) दूसरे जुमेरात (बृहस्पति-वार)। इसका कारण ऐसा बतलाया गया है कि जुम्मे को क़यामत होगी, जिसे प्रलय कहते हैं। जुमेरातको रात को प्राणिमात्र पशु-पक्षी-मनुष्य इत्यादि सबही काँपते रहते हैं। जब वे देखते हैं कि शुक्रवार का दिन आरम्भ हो गया तो ईश्वर को धन्यवाद देते हैं कि क़यामत नहीं हुई। उसी दिन वे सब मिलकर नमाज़ पढ़ते हैं। शुक्रवार मुसलमानों का सैबथ Sabbath—महा पवित्र दिन है जैसे कि ईसाइयों का रविवार। मुसलमानों में नमाज़ (प्रार्थना) को सर्वश्रेष्ठ कार्य बताया गया है। बिना नमाज़ के किसी को मुक्ति या शान्ति नहीं मिल सकती। कम से कम पांच बार नमाज़ पढ़नी चाहिये। सवेरे चार बजे की नमाज़ को 'फजर' की नमाज़ कहते हैं। दूसरी नमाज़ दो बजे होती है उसे 'जुहर' की नमाज़ कहते हैं। तीसरी 'असर' की नमाज़

है जो कि चार बजे पढ़ी जाती है। चौथी नमाज़ 'मग़रिब' की नमाज़ है। यह शाम की पढ़ी जाती है। पांचवीं नमाज़ 'ईशा' की है जो कि ८ बजे रात को पढ़ी जाती है। नमाज़ में सब मुसल्मान इकट्ठे होकर या अपने-अपने घर में नमाज़ पढ़ते हैं। सब का मुँह मक्के की मस्जिद की तरफ़ रहता है। नमाज़ में ईश्वर की प्रार्थना, उसकी भयङ्कर शक्ति और उसीके गुण गाये गये हैं।

मुसल्मानों के यहां क़ुरान और हदीस ये दो ही माननीय पुस्तकें हैं। क़ुरान ख़ास आसमान से उतरी हुई पुस्तक है। यह हिन्दुओं की श्रुतियों के समान है। हदीस बयान की हुई कर्मकाण्ड पर मनुष्यकृत पुस्तक है। यह मुसल्मानों की स्मृति है।

मुसल्मानों में विवाह की रस्म बहुत ही सरल है। मुहम्मद साहब ने अपनी लड़की की शादी में दो इज़ारबन्द, दो घड़े और एक चक्की दी थी। इनके यहां एक प्रथा है जिसे मेहर कहते हैं। यह वह रुपया है जो विवाह के समय पतिके द्वारा स्त्री को दिया जाता है या जिसके दिये जानेका क़रार होता है। सब मुसल्मानोंको एक दूसरे से भ्रातृभाव रखना चाहिये। यही उनके रसूल की आज्ञा है। भारत, अरब, टर्की, और अफ़ग़ानिस्तान के मुसल्मान सब सामाजिक बन्धन के एक ही सूत्र में दृढ़ता पूर्वक बँधे हुए हैं और यही उनकी इज़्ज़त अथवा शक्ति का कारण है। इनकी एकता को देखकर संसार-

भी जाती थीं। इनकी लूटमार की कहानियों को सुन कर मनुष्य के रोमांच हो जाता है। इनके पाशविक अत्याचारों का हाल सुनकर हृदय काँप उठता है। शराब-ख़ोरी का बड़ा प्रचार था। इधर बालक ने दूध छोड़ा, उधर उसे शराब पिलाना शुरू किया। मनुष्यों को मार डालना उनके लिये एक साधारण बात थी। ज़रा ज़रा सी बातों पर उनके यहाँ वर्षों न मिटने वाले झगड़े होते थे। लड़कियों के साथ बड़ा अत्याचार होता था। पति की नज़र बचा कर मातायें उनको पैदा होते ही मार डालती थीं। वे लड़की का विवाह करके किसीके सम्बन्धी बनना महा पाप समझते थे।

बहु विवाह की हानिकारक प्रथा उनमें जारी थी। मनुष्य अपनी इच्छा के अनुसार बहुत सी शादियाँ कर सकता था— और जब चाहें वह अपनी स्त्री को त्याग भी सकता था। द्वेष, ईर्षा, और शत्रुता का भाव अरब जाति में कूट कूट कर फैला हुआ था।

अरब के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध स्थानों में प्रतिवर्ष बड़ी धूमधाम से मेले हुआ करते थे। वहाँ देश के हर भाग के लोग एकत्रित होते और वीरता के कर्तब दिखलाते थे। मक्का में काबा के पास भी इसी प्रकार का एक मेला लगता था, जो बाद में इस्लाम धर्म के इतिहास में हज कहलाने लगा। इस मेले में देश-देशान्तर के लोग इकट्ठे होते थे। कोई तो जादू के चमत्कार दिखलाते, कोई क़सीदे (कवितायें) पढ़ते, कोई तीर

बहों के हुनर दिखलाते थे। कोई निर्बुद्धि कबीले ज़रा सी बात पर लड़ने को तय्यार हो जाते और वर्षों तक अपने भाइयों का खून बहाते थे। इन दिनों में ऐसी ऐसी कुरीतियाँ, अप्राकृतिक बर्ताव, बेरहम—निर्दय—कार्य किये जाते थे कि उनका वर्णन करना भी एक प्रकार की निर्लज्जता है।

अरब और इस्राइल लोगों की भूमि में, जहाँ से ईसाई और मुसलमानों के धर्म का आरम्भ हुआ था, एक ईश्वर की पूजा का भाव वर्तमान था, परन्तु वे सब बुत-परस्त थे। इन्हीं बुतों की पूजा से वे ईश्वर तक पहुँचने की आशा रखते थे। मुहम्मद साहब के समय में बुत-परस्ती (मूर्तिपूजा) का सर्वत्र प्रचार था। उनको विश्वास था कि यह मूर्तियाँ खुदा के सामने हमारी सिफारिश करेंगी। वे प्रसिद्ध-प्रसिद्ध पुरुषों अथवा अपने पूर्वजों की मूर्ति की पूजा किया करते थे। हर एक कबीले की अलग-अलग मूर्ति थी। ऐसा कोई घर नहीं था जहाँ मूर्ति न हो। मुहम्मद के समय अरब एक जंगली देश के सदृश था।

ऐसे अज्ञान और अन्धकार में घिरे हुए समय और देश में मुहम्मद साहब का जन्म एक प्रसिद्ध कबीला, कुरैश की शाखा, बनीहाशम में हुआ।

उनके परदादा हाशिम ने काबा और मक्का को शत्रुओं से बचाया था इसीलिये शरीफ़ काबा या शरीफ मक्का का पद भी उनको मौरूसी (परम्परागत) तौर से दे दिया गया था। यह

पद अरब-निवासियों की दृष्टि में बड़ी प्रतिष्ठा अथवा से देखा जाता था। मुहम्मद साहब के जन्म-काल में दादा अब्दुल मतलब शरीफ़ काबा के पद पर नियुक्त थे।

अब्दुल्ला बिन अब्दुल मुतलब ने २४ वर्ष की अव आमना-बिनते-वहब से विवाह किया। यह वती स्त्री गर्भवती हुई। परन्तु अब्दुल्ला को हज़रत मु का मुँह देखना ही नसीब न था। वह एक व्यापारी क़ा के साथ शाम की ओर चले गये और वापसी के बीमार होकर मदीन में उनका शरीरान्त होगया। इस जब कि फ़ैल की घटना को केवल ४५ दिन ही हुए थे कि १' रबीउल-अव्वल (२८ अगस्त सन् ५७० ईसवी) को हज़र मुहम्मद पैदा हुए।

वृद्ध अब्दुल मुतलब बालक-जन्म का समाचार सुनते ही दौड़े आये और इस बालक को अपनी गोदमें उठाकर ले गये। काबे का दर्शन करा कर ईश्वर को धन्यवाद दिया। कुछ काल तक स्वयं आमना ने, फिर मुहम्मद साहब के चचा अबूलहब की एक लौंडी ने उनको दूध पिलाया। जब बालक सात दिनका हुआ तब अपने समाज के नियमानुसार अब्दुल मतलब ने अपने क़बीले को भेज दिया और बड़ा आनन्द मनाया सब के सामने बच्चे का नाम 'मुहम्मद' रक्खा।

मुसलमानों की कितनी ही रवायतों में यह लिखा है कि आमनह ने अपने बालक का नाम अहमद रखा था। किसी

देवदूत ने उसे स्वप्न में यह कहा था कि तेरे यहाँ एक लड़का पैदा होगा। ईश्वर की आज्ञा है कि तू इसका नाम अहमद रख। मुहम्मद साहब इसीलिये मुहम्मद और अहमद इन दोनों नामों से पुकारे जाते हैं।

इन दिनों अरब में यह नियम था कि मातायें अपने बच्चों को दूध पिलाने के लिये, किसी अच्छे घर की आया के हवाले कर दिया करती थीं। तदनुसार आमनह के बच्चे को भी कबीला सबीसअद की एक स्त्री, जिसका नाम हलीमा था, लेगई। वह हर छठवें महीने बालक—मुहम्मद को उनकी माता और नाना से मिलाने के लिये लाया करती। जब मुहम्मद दो वर्ष के हुए तब उनका दूध पीना छुड़ा दिया गया और हलीमा बालक को लेकर उनकी माँ के पास आई। माता ने देखा कि उसका बच्चा खूब अच्छी तरह पाला गया है। कहीं ऐसा न हो कि मक्के की जल-वायु बालक के स्वास्थ्य को हानि पहुँचाये, इसलिये उन्होंने फिर हलीमा से कहा कि तू इसको अपने ही घर वापिस ले जा। जब यह बड़ा होगा, हम आप ही इसे बुलालेंगे।

इस प्रकार अरब की काया पलटने वाले मुहम्मद का बाल्य काल व्यतीत हुआ। इसी अपढ़ उपवन में इनकी शिक्षा आरम्भ हुई!! हलीमा बालक को साथ लिये वापिस चली आई। चार वर्ष की अवस्था तक यह इसी घर में रहे।

जब मुहम्मद साहब की अवस्था ६ वर्ष की हुई तब उनकी

माता उन्हें मदीना लेगई। वहाँ से वापिस आते समय अबुआ नामक ग्राम में उनका शरीर छूट गया। ऐसे दुर्भाग्य-काल में अब्दुल मतलब ने अपने नाती का लालन-पालन किया; परन्तु यह आठ वर्ष के न होने पाये थे कि इनको भी मृत्यु होगई। अब इनके पालने का भार इनके सगे चचा अबूतालिब पर पड़ा।

एक महात्मा से बात करते समय लेखक पर यह बात प्रकट हुई थी कि जिस घर में ब्रह्मज्ञानी पैदा होता है वह घर या तो असाधारण उन्नति करता है या सर्वथा नाश को प्राप्त होता है। यदि गहरी दृष्टि से इस पर ध्यान दिया जाय तो इसमें अधिकांश सत्यता प्रतीत होती है। इसका एक कारण यह हो सकता है कि निस्सहाय छोड़े जाने के बाद उनमें सहिष्णुता, गम्भीरता, धैर्य्य और आत्मबल का अंकुर बढ़ जाता है। जिस पुरुष ने अपने पिता के प्रेम-भरे नेत्रों को न देखा हो, जिसने उसका दर्शन तक न किया हो; जो बाल्यकाल में ही मातृ-विहीन होगया हो; जो उस अवस्था में जब कि बालक अपने माता-पिता के लाड़-प्यार के आनन्द-सागर में निमग्न रहते हैं, और बचपन की उमङ्ग में हर प्रकार के खेल कूद में शामिल रहते हैं—आशय यह है—जो बालक उदासीनता और मातृ-पितृ-विहीनता का दारुण क्लेश भोग चुका है, ऐसा बालक नाना प्रकार के कष्ट उठाने के कारण दूसरों के दुखों का भी अनुभव कर सकता है और सम्भवतः उससे यह आशा की जाती है कि वह निर्धन,

बेकस, निस्सहाय और मानसिक अथवा शारीरिक व्यथा से पीड़ित पुरुषों का दुःख दूर कर सकता है।

कदाचित् ईश्वर की यह इच्छा थी कि इन पर ऐसे कष्ट डाले जावें और इन कष्टों से उनको धैर्य्य, दया अथवा प्रेम की शिक्षा दी जावे; ताकि यह स्वयं इस शिक्षा का प्रचार अरब में करके वहाँ के अन्धकारमय जीवनका नाश करें और वहाँ ईश्वरीय प्रकाश फैलावें।

इन सब विपत्तियों ने मुहम्मद को विचारी और चिन्ताशील बना दिया। जो गुण साधारण मनुष्यों में नहीं पाये जाते, वे इनमें वर्तमान हो चले। इनके देश के पहाड़, टीले, मरुस्थल और सुनसान निर्जन वन ही इनके सुख-दुःख के साथी थे। यह आठ वर्ष की अवस्था से ही पहाड़ों और जनशून्य बनों में अकेले फिरा करते और प्रकृति के महा विद्यालय में सत्य की शिक्षा पाते थे, यह एक सुनसान खाई में, जो इस्लामी इतिहास में गारेहरा के नाम से प्रसिद्ध है, जाकर अपना समय व्यतीत करते और दिन रात कुछ न कुछ सोचा ही करते थे।

अबूतालिब ने अपने अनाथ भतीजे को बड़े प्रेम और कष्ट से पाला था। मुहम्मद साहब को भी इनसे इस प्रकार का प्रेम होगया कि वे इनको एक चण के लिये भी नहीं छोड़ते थे। एक बार जब कि अबूतालिब शाम की यात्रा के लिये तैयार हुए थे तब मुहम्मद ने भी उनके साथ जाने की इच्छा प्रकट की थी। वे अपने चाचा के घुटनों से लिपट गये।

अन्त में अबूतालिब इनको अपने साथ लेजाने को राज़ी होगये ।

मुसलमानों की किताब में लिखा है कि जब क़ाफला सफ़र करता हुआ बसरा में पहुँचा तब वहाँ बहीरा नामक एक साधु से मुहम्मद साहिब को बातचीत हुई । वह इनकी बुद्धि और हृदय की चैतन्यता (रोशन ज़मीरी) को देखकर चकित हो गया । इन्होंने अबूतालिब को बहुत ताकीद की, कि इस बच्चे की अच्छी देख-रेख करना । यह अरब का सूर्य होगा । अरब में से इसी के पुरुषार्थ से बुतपरस्ती (मूर्तिपूजा) का नाम व निशान मिट जायगा । ऐसा न हो कि यह यहूदियों के फन्दे में फँस जावे और वे लोग इसको मार डालें ।

कहीं कहीं लिखा है कि उसने यह भी कहा था कि यह वह महापुरुष है जिसके आने का समाचार मसीह ने दिया था और यह खुदा का रसूल और अन्तिम पैग़म्बर होगा । अबूतालिब ने साधु की यह भविष्यवाणी सुनकर मुहम्मद की रक्षा करने का अच्छा प्रबन्ध कर दिया ।

मुहम्मद साहब को इस यात्रा से बहुत लाभ पहुँचा । उन्होंने पहाड़ों और नगरों को देखा और वहाँ का विशेष हाल जाना । भ्रमण करते हुए भिन्न-भिन्न प्रान्तों को देखकर उनके हृदय में ईश्वरीय वैभव का विचार बार बार आने लगा । पहाड़ों, मरुस्थलों, जङ्गलों, नदियों, और नालों अर्थात् सब ही प्राकृतिक वस्तुओं ने उनके हृदय पर एक भारी प्रभाव डाला ।

जब कभी लोग ईश्वर की हस्ती (अर्थात् ईश्वर के होने) से इंकार करते तो वे प्रकृति की ओर इशारा करके कहते कि तुम नहीं जानते हो कि ये सब वस्तुयें किसने पैदा की हैं और किस प्रकार ये सब उसकी सत्ता (हस्ती) को सिद्ध कर रही हैं। थोड़े ही दिनों में कुरैश कुरैश और बनी हवाजन में लड़ाई प्रारम्भ हुई। यह वह लड़ाई है जो अरब के इतिहास में हरबुल फिजार के नाम से प्रसिद्ध है। उस समय मुहम्मद साहब की आयु चौदह या पन्द्रह वर्ष की थी। वे अबूतालिब के साथ दो लड़ाइयों में शामिल हुए। यह पहला अवसर था कि मुहम्मद साहब युद्ध में शामिल हुए। इसके बाद फिर २५ वर्ष की आयु तक इनका जीवन एक साधारण मनुष्य के जीवन के समान रहा। इस अवसर में कोई भी उल्लेखनीय घटना नहीं हुई। हां, इन्होंने यमन आदि के आस-पास व्यापार के हेतु भ्रमण अवश्य किया; जिससे इनकी ईमानदारी, सत्यप्रियता और शील स्वभाव की भी खूब प्रसिद्धि हुई। लोगों ने इनको सादिक और अमीन की पदवियां प्रदान कीं।

इन्हीं दिनों में मक्का में एक विधवा स्त्री खदीजह नाम की रहती थी। पहिले उसने दो निकाह (विवाह) किये थे। उसका दूसरा पति बहुत मालदार था। जब वह मर गया तो उसको एक नौकर की ज़रूरत पड़ी। मुहम्मद साहब की प्रशंसा सुनकर उसने इनको कारिन्दा बनाना चाहा और कहा कि मामूली वेतन की जगह इन्हें मैं दूना वेतन दूंगी।

अबूतालिब की सहायता से उन्होंने यहाँ नौकरी करना स्वीकार किया। वह ख़दीजह का माल लेकर यमन को गये। वहाँ इस कार्य में उनको ख़ूब लाभ हुआ। मुहम्मद साहब के काम को अथवा उनकी ईमानदारी को देखकर खदीजह उनपर मुग्ध होगई और उसने उनसे विवाह करनेकी इच्छा प्रगट की। इस समय मुहम्मद साहब की आयु २५ वर्ष की थी और खदीजह की अवस्था ४० वर्ष की थी। परन्तु परस्पर की रज़ामन्दी से दोनों का विवाह होगया। इस सुख के अवसर में खदीजह ने बड़े समारोह के साथ क़बीला क़ुरेश को एक भोज दिया। इस विवाह से इस दम्पति के १५—१६ वर्ष बड़े सुख से व्यतीत हुए। इसके बाद मुहम्मद साहब के जीवन में एक नये युग (काल) का आरम्भ हुआ।
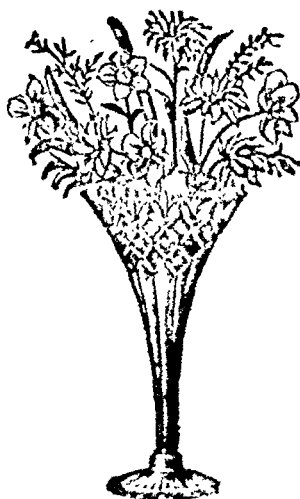
दूसरा परिच्छेद।

धर्म्म प्रचार और विघ्नों का सामना।

खदीजह एक माल्दार स्त्री थी। उसने अपनी इच्छा ही से मुहम्मद साहब से विवाह किया था। इसलिये इस सम्बन्ध के होने से मुहम्मद साहब के कई प्रकार के फ़िक्र मिट गये। वे खदीजह को बहुत चाहते थे। जैसा वह कहती थी वैसा ही वे करते थे। खदीजह भी इनकी बात को कभी नहीं टालती थी। मुहम्मद साहब के विवाह का समाचार सुन कर उनकी दूध-माँ (धाया) हलीमा उनके पास आई और उनसे अपनी ग़रीबी का हाल कहा। मुहम्मद साहब ने यह बात खदीजह से कही। उसने उसी क्षण हलीमा को ४० भेड़ें देदीं। उन्हें लेकर वह सानन्द अपने घर चली गई।

खदीजह से मुहम्मद के एक लड़का और चार लड़कियाँ पैदा हुईं। लड़के का नाम क़ासिम था, किन्तु वह युवा होने के पहिले ही मर गया। खदीजह जब तक जीवित रही

मुहम्मद साहब का साथ देती रही। मुहम्मद साहब भी उसकी बड़ी प्रशंसा किया करते थे। उसकी जीवितावस्था में मुहम्मद साहब ने दूसरा विवाह नहीं किया। उसकी मृत्यु के बाद भी जब कभी उसे वे याद करते तब उन्हें बड़ा दुःख होता था। मुसलमानों की किताबों में लिखा है कि जब मुहम्मद साहब ने आयशा से विवाह किया तब एक दिन उसने इनसे पूछा कि आप इस प्रकार खदीजह की याद क्यों करते हैं। क्या वह बूढ़ी न थी? और क्या परमात्मा ने आपको उससे अच्छी स्त्री नहीं दी है? मुहम्मद साहब ने एक ठण्डी आह खींच कर कहा,—"नहीं, कदापि नहीं। जब मैं ग़रीब था तब उसने मुझ से विवाह करके मुझे धनवान बनाया। जब जन-समुदाय मुझे झूठा कहता था तब उसने मुझे सच्चा जाना। जिस समय सारा अरब मेरे विरुद्ध था, उस समय उसने मेरा साथ दिया।" मुहम्मद साहब की चारों लड़कियों के नाम ये हैं,—रक़िया जो उस्मान बिन-उफ्फान को विवाही थी। ज़ीनब, जो अबूल आस से व्याही गई। फ़ातमा, जो अली से व्याही गई और उमकलसूम। खदीजह के साथ विवाह कर लेने के पश्चात् मुहम्मद साहब ने अपने देश की सेवा करने का निश्चय किया। पहिले-पहल उन्होंने उस आज्ञा को पुनः जीवित किया जिसके द्वारा मक्का की चहारदीवारी के भीतर किसी प्रकार का अत्याचार करने की किसी मनुष्य को भी आज्ञा नहीं थी। यहां ही उन्होंने अरब के चार क़बीलों

को भी अपने साथ मिलाया, इसका जो सुपरिणाम निकला वह इन्हीं के परिश्रम का फल था।

कुछ दिनों के पश्चात् उस्मान-बिनहारिस, जो ईसाई हो गया था, अपने देश-बन्धुओं और देश को धोखा देकर, मक्का को यूनान के सिपुर्द (अधिकार में) करने का षड़यन्त्र रचने लगा। किन्तु मुहम्मद साहब ने अपने तन मन धन के प्रयत्न से अपनी मातृ-भूमि को विदेशी राज्य के दासत्व से बचा लिया। यह बात अरबी इतिहास में प्रशंसनीय है।

जब मुहम्मद साहब की आयु ३५ वर्ष की हुई, तब मक्का निवासियों में संग असवद के उठाने के लिये बड़ा झगड़ा हुआ। काबा में आग लग जाने से वह धर्म-मन्दिर जिसको हज़रत इब्राहीम ने बनवाया था गिर गया। अब मक्का-निवासी उसे फिर बनवाना चाहते थे। झगड़ा इस बात का हुआ कि संग असवद को कौन उठा कर लगाये। हर एक क़बीला यही चाहता था कि पहले हमही उसको चढ़ायें। अन्त में सब की यह राय हुई कि जो मनुष्य सब से पहिले हरम के द्वार से भीतर आवे उसकी राय पर इस झगड़े का निर्णय हो। मुहम्मद साहब ही पहिले हरम के द्वार से निकले। उन्हीं की राय पर यह मामला छोड़ दिया गया। उन्होंने सोच कर यह उपाय निकाला कि एक बड़ी चादर पृथ्वी पर बिछाई जावे और उस पर वह स्वयं सङ्ग असवद को रख दें। फिर एक एक क़बीले का एक एक आदमी चादर

का किनारा पकड़कर उसके उठाने में शामिल हो जावे औ
जहाँ संग असवद को रखना हो रख देवे । मुहम्मद साहब
इस न्याय से सब लोग बहुत ही प्रसन्न हुए ।

इसके कुछ दिन पश्चात् मुहम्मद साहब ने मनुष्य जाति के
प्रति प्रेम अथवा सहानुभूति का एक नया उदाहरण उपस्थित
किया । ज़ेद इब्नहारिस किसी लड़ाई में पकड़ा गया था
उसके शत्रुओंने उसको खदीजह के भतीजे के हाथ बेंच दिया।
भतीजे ने इस गुलाम को अपनी फूफी (बुआ) को भेंट किया
मुहम्मद साहबने ज़ेद की दशा पर तरस खा कर उसको खदी-
जह से मांग लिया और उसे स्वतन्त्र कर दिया । ज़ेद के बाप
को इस बात की कुछ भी ख़बर नहीं थी । थोड़े दिनों के बाद
वह कुछ रुपया लेकर उसको छुड़ाने के हेतु आया । मुहम्मद
साहब ने कहा कि वह स्वतन्त्र है । उसकी इच्छा है चाहे यहाँ
रहे और चाहे आपके साथ जावे । किन्तु ज़ेद बाप के साथ
जाने को राज़ी न हुआ । वह मुहम्मद साहब के साथ ही
रहने लगा । मुहम्मद साहब ने उसका विवाह अपनी फुफेरी
बहिन ज़ैनब से करा दिया । ज़ैनब अरब के एक अच्छे वंश
की लड़की थी ।

जब मुहम्मद साहब अपने देश के अन्धकार को देखते थे
तब उनका हृदय विह्वल हो जाता था । वे बुतपरस्ती को देखकर
बहुत घबराते थे । उस समय स्त्रियों की भी दशा शोचनीय थी।
निरापराध लड़कियों को जीते जी मारडालने की कुप्रथा से

उनका हृदय और भी दुःखित रहता था। इन सब कारणों को देखकर वे सदा एकान्त सेवन करते और मनुष्यों से बहुत कम मिलते थे और वहां पर ही वे उनके दूर करने के उपायों पर विचार करते थे। रमज़ान के महीने में प्रति वर्ष वे गारहिरा में रहते और ईश्वर का ध्यान करते थे। जो कोई भूला-भटका यात्री वहां निकल पड़ता उसे मार्ग बतलाते थे। ईश्वर से सदैव यह प्रार्थना किया करते कि उनका देश अविद्या के अन्धकार से मुक्त होवे। वे ईश्वर के सामने इसी हेतु घण्टों रोया करते थे। कथन ठीक निकला कि जो ढूँढ़ता है वह अन्त में पाता है। इल्हाम इलाही का स्रोत उनके हृदय से फूट निकला। उनके हृदय में ईश्वरीय प्रकाश फैल गया। उनको धीरे धीरे विश्वास हो गया कि ईश्वर ने मुझे मुख्य इसी काम के लिये उत्पन्न किया है कि मैं अपने देश का अन्धकार दूर करूँ। उनको इस बात का विश्वास हो गया कि जब मनुष्य बहुत पाप करने लगते हैं और धर्म का पालन करना छोड़ देते हैं तब वह किसी महापुरुष को इस संसार में अवतरित करता है। इस समय यह काम मेरे सुपुर्द किया गया है। जैसा कि पहिले कभी उसने अब्राहीम, मूसा, ईसा आदि महात्माओं को सौंपा था। यह विचार निश्चय पाकर दृढ़ हो गया था। वे बहुधा अदृश्य पुरुषों की बातचीत सुनते थे। सोते, जागते नाना प्रकार के चमत्कारिक दृश्य देखते और नित्य नूतन प्रकाश पाते। वह जो स्वप्न देखते सदा सच निकलता। जब उनकी आयु

४० वर्ष की हुई उस समय गारेहिरामें बैठे हुए उन्होंने देखा कि कोई मनुष्य उन्हें बुला रहा है और कहता है कि पढ़। मुहम्मद साहब ने उसे उत्तर दिया कि मुझे पढ़ना नहीं आता है तब फरिश्ते (देवदूत) ने कहा कि:—पढ़ अपने मालिक पालने वाले के नाम से जिसने इस संसार को पैदा किया है। जिसने जमे हुए लोहू से मनुष्यों का संसार बनाया है। पढ़ अपने मालिक के नाम से जो बड़ा दयावान है। जिसने क़लम के द्वारा हमको विद्या प्रदान की है। मनुष्यों को वे बातें सिखलाईं जो वह नहीं जानता था।

जब मुहम्मद साहब पर यह 'वही' नाज़िल हुई तब तो वह खदीजह के पास घबराते हुए आये और उनको सब हाल बतलाया। खदीजह ने उनको धैर्य दिया और कहा कि तुम निःसन्देह पैग़म्बर हो। मैं तुम पर विश्वास लाती हूँ। उसी दिन से उसने बुतप[illegible] -पूजा) छोड़ दी।

खदीजह [illegible] वरका-बिनन [illegible]
उसने यह ह[illegible] [illegible] मुहम्मद
भरोसा किय[illegible]
नवयुवक था [illegible] होगया;
मुसलमान बन[illegible]
अली को [illegible]
पहाड़ों पर चले [illegible]
थे। एक बार [illegible]

अली का बाप अबूतालिब वहाँ आ पहुँचा। उसने मुहम्मदसाहब से कहा कि बेटा! बता तू किस धर्म पर चलता है? मुहम्मद साहब ने कहा कि धर्म ईश्वर का है, उसके फरिश्तों का, उसके पैग़म्बरों का, और हमारे दादा इब्राहीम का जिस पर मैं चलता हूँ। ईश्वर ने मुझे इसीलिये पैदा किया है कि मैं उसके बन्दों को जो सत्य का मार्ग छोड़ चुके हैं उस मार्ग पर लाऊँ। ऐ चाचा साहब! आप भी इस कार्य के योग्य हैं। मैं चाहता हूँ कि आपको भी मैं सत्य के मार्गपर ले चलूँ। आप इस धर्म को स्वीकार करके उसके फैलाने में मेरी सहायता करें। परन्तु अबूतालिब ने कहा कि मैं अपने पूर्वजों का धर्म नहीं छोड़ सकता हूँ। किन्तु परमात्मा की शपथ खाकर कहता हूँ कि जब तक जीता हूँ आपकी सहायता करता रहूँगा। और कोई आपका बाल बांका न कर सकेगा। इसके बाद उसने अपने बेटे अली से पूछा कि बेटा! तेरा कौन सा धर्म है। अली ने उत्तर दिया कि मैं खुदा और उसके पैग़म्बर पर ईमान ले आया हूँ। मैं उसका साथ दूँगा। तब अबूतालिब ने कहा कि जाओ उनके साथ रहो वे सदैव तुम्हें सत्मार्ग पर ले जावेंगे।

इसके बाद स्वतन्त्र हुए गुलाम ज़ैद ने इस्लाम धर्म को स्वीकार किया। तत्पश्चात् अबूबकर भी शामिल होगये। धीरे-धीरे मुसलमानों की संख्या बढ़ती गई। ४३ वर्ष की आयु तक मुहम्मद साहब चुपके चुपके लोगों को बुतपरस्ती से मना और सद् धर्म का निमन्त्रण देते रहे। एक दिन इन्होंने अपने सब

सम्बन्धियों और क़बीलों को अपने घर पर बुलाया और यहाँ पर इस्लाम का उपदेश किया। यह बात मनुष्यों को बहुत ही बुरी प्रतीत हुई और उसी दिन से दोनों के बीच झगड़ा होना प्रारम्भ हो गया। अबूतालिब की बड़ी हँसी उड़ाई गई परन्तु इससे मुहम्मद साहब हतोत्साह नहीं हुए। अब वे और जोश और उत्साह से काम करने लगे। ईश्वर पर भरोसा रखकर वे रोज़ बाज़ार में उपदेश दिया करते। (जिसे वाज़ कहते हैं बुतपरस्ती का इस ज़ोर से खण्डन करते देख कर अरब के लोग इनके विरुद्ध होगये। क़ुरैश ने तङ्ग आकर अबूतालिब से शिकायत की और कहा भी कि हम आपके लिहाज़ से इस मूर्ख, बेधर्म दीवाने को छोड़ देते हैं। नहीं तो हम अभी तक उसे मार डालते। यदि आप इसका पक्ष लेते हैं तो आइये हम तुम दोनों लड़ कर इसका निर्णय कर लेवें। अबूतालिब ने इनको टाल कर और मुहम्मद साहब को बुला कर समझाया कि बेटा तुम इस कार्य को छोड़ दो। मुहम्मद साहब ने जब देखा कि अबूतालिब भी अब मेरी सहायता करना नहीं चाहते तब उन्होंने दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया कि चाहे इधर की दुनियाँ उधर हो जावे, मैं अपने निश्चित मार्ग से एक पद भी पीछे नहीं हट सकता। यह कहते कहते उनका हृदय गद्गद हो उठा और आँखों में आँसू आगये।

अबूतालिब पर इस दृढ़ निश्चय-पूर्ण बातका बड़ा प्रभाव पड़ा। उसने मुहम्मद साहब को फिर बुला कर कहा कि अच्छा जो

तुम्हारी इच्छा हो वही करो। मैं तुम्हारा साथ कभी नहीं छोड़ूँगा।

मुहम्मद साहब जहाँ जाते वहाँ बुतपरस्ती का खण्डन करते और एक ही परमेश्वर पर निष्ठा लाने का उपदेश देते थे। सब के हृदय हिलने लगे परन्तु कुरैश पर इसका कुछ भी प्रभाव न पड़ा। वह इनके विरुद्ध बड़ी बड़ी तैयारियाँ करने लगा, किन्तु वह अपनी इच्छा कभी भी पूर्ण न कर सका।

इसके बाद कुरैश ने सोचा कि वह मुहम्मद साहब को कोई ज़बरदस्त सांसारिक लालच देकर उनको इस नये मत के प्रचार से दूर रक्खे। एक मनुष्य इसी हेतु से मुहम्मद साहब के पास भेजा गया और उनसे कहा गया कि आप बड़े अच्छे आदमी हैं। आपने एक श्रेष्ठ वंश में जन्म लिया है किन्तु हमलोगों में आप फूट का बीज बो रहे हैं। आप हमारी मूर्तियों और महापुरुषों का निरादर करते हैं। आप हमारे पूर्वजों को मूर्ख बतलाते हैं। हमारी आपसे एक विनय है कि यदि आपकी इच्छा धन दौलत एकत्रित करने की है तो हम अरब में आपको सब से ज़ियादा धनवान बना सकते हैं। यदि आप हमारे सर्दार बनना चाहें तो यह भी हमें स्वीकार है। हम आपकी आज्ञा के बिना कोई भी काम न करेंगे। यदि आप यहाँ के राजा बनना चाहें तो वह भी हम लोग कर सकते हैं। यदि अभाग्यवश कोई प्रेत आपके सिर पर सवार हो तो गुनियों को बुला कर उसका इलाज करावें।

जब वह कुरैशी अपना जातीय संदेशा सुना चुका तब मुहम्मद साहब ने इसके उत्तर में क़ुरान शरीफ़ की कुछ आयतें पढ़ीं जिनका अर्थ यह है :—

यह आज्ञा ईश्वर (खुदा) की है जो रहमान वा रहीम (दयालु) है। यह आज्ञा पढ़ने-योग्य है। इसकी आयतें ठीक हैं। तुम्हारी मातृ-भाषा अरबी में यह भली भाँति समझाई गई हैं। यह समाचार खुदा का समाचार और दण्डका भेद सुनाने वाला है। शोक है कि लोग इस ईश्वरीय आज्ञा को नहीं सुनते। वे बड़े घमण्डके साथ कहते हैं कि जिस बात की ओर तू हमें झुकाता है वह बात हमारे हृदय तक पहुँच न सकेगी। हमने अपने कान इन उपदेशों के सुनने से बन्द कर लिये हैं। तेरे और हमारे बीच एक गहरा पर्दा पड़ा हुआ है। इसलिये तू जो चाहे कर हम समझ लेवेंगे।

ऐ पैग़म्बर ! तू इनको कह दे कि मैं तो बिल्कुल साधारण मनुष्य हूँ। केवल इतनी बात है कि मुझे यह ईश्वरीय आज्ञा मिली है कि तुम्हारा बनाने वाला और तुम्हारा मालिक एक ही ईश्वर या खुदा है। तुम उसकी ओर अपना दिल लगाओ और उसीसे अपने पापों के लिये क्षमा मांगो। वे लोग जो मनुष्यों को ईश्वर का स्थान देते हैं नरकगामी होंगे। जो खुदा के लिये कुछ ख़र्च नहीं करते, दूसरे जीवन (परलोक) पर विश्वास नहीं करते वे भी नरकगामी होंगे। जिन लोगों ने

विश्वास किया है और पवित्र कामों से नया जीवन प्राप्त किया है उन्हें अनन्त सुख का जीवन प्राप्त होगा।

कुरैश के दूत ने जब ये सब वाक्य सुने तो उसने, चुपचाप वहाँ से वापस जाकर, कुरैश से अपने मन की दशा समझाई और यह बतलाया कि मुहम्मद साहब के उपदेश सुनते २ मुझ में बोलने तक की ताब न रही।

जब कुरैश इस काम में भी सफल न हुए तब उन्होंने मुसल्मानों को नाना प्रकार से कष्ट देना आरम्भ किया। निकटवर्ती सम्बन्धी भी उनके विरुद्ध उठ खड़े हुए। सगा चाचा अबूतालिब जानी दुश्मन बन गया। चाची की यह दशा थी कि जङ्गल से काँटे और गोखरू समेट लाती और जिस जिस मार्ग से मुहम्मद साहब जाते वहाँ वहाँ वह गोखरू और काँटे फैला देती थी। मुहम्मद के पाँव जख्मी होते थे। वे बैठ कर अपने पाँव से काँटे निकालते और उन्हें रास्ते से दूर फेंकते जाते थे जिससे कि अन्य चलनेवालों को ऐसा कष्ट न सहन करना पड़े। जब आप कुरान शरीफ़ पढ़ते और उपदेश देने को खड़े होते तब लोग शोर मचाते जिससे कि कोई मनुष्य इनका उपदेश न सुन सके। लोग आपको कहीं खड़ा नहीं होने देते थे।

जब मुहम्मद साहब तङ्ग होकर जाने लगते थे तब उनके ऊपर ढेलों और पत्थरों की वर्षा की जाती थी। यहाँतक कि इन पत्थरों की चोट से इनका शरीर भी ज़ख्मी हो जाता था।

एक बार कुछ लोगों ने आपको एकान्तावस्था में पाकर पकड़ लिया और गलेमें पटका (फांसी) डाल कर उसे मरोड़ना आरम्भ किया कदाचित् उस समय उनके प्राण भी निकल जाते कि उधर से अबूबकर आ निकले। उन्होंने बड़ी कठिनाई से उन्हें छुड़ाया। इस पर अबूबकर को भी बहुत मार खानी पड़ी। वह बेहोश होकर पृथ्वी पर गिर पड़े।

हज़रत मुहम्मद साहब के ऊपर नाना प्रकार के अत्याचार होते थे परन्तु वे सब को सहन करते रहे। उनके साथियों का दुःख अथवा उन पर जो अत्याचार किये जाते थे उन्हें मुहम्मद साहब नहीं देख सकते थे। वे उनके दुःखों को देख अत्यन्त दुखी होते थे। लोग उन्हें पकड़ कर जङ्गल में लेजाते और वहां उन्हें नङ्गा करके खूब गरम बालू (रेता) पर लिटा देते थे और उनकी छातियों पर तपती हुई पत्थर की सिलें रख देते थे। इस अत्याचार से बहुत से लोग मृत्यु को प्राप्त होगये। इन्हीं अत्याचारों को सहनेवाले सत्याग्रही अनुयायियों में एक मनुष्य अम्मार था जिसको सहनशीलता के कारण यदि उसे महात्मा कहें तो अनुचित न होगा। उसके हाथ बाँध दिये जाते और पथरीली गरम पृथ्वी पर लिटा कर उसकी छाती पर भारी पत्थर रख देते और कहते कि मुहम्मद को गाली दो। यही हाल उसके बुड्ढे बाप का किया गया। उसकी स्त्री इस अत्याचार को न देख सकी। वह रोने और चिल्लाने लगी। इस पर वह नग्न की गई और उस पर नाना

प्रकार के निन्दनीय अत्याचार किये गये, जिससे उसे बहुत कष्ट हुआ और अन्त में वह मर गई।

ईमान्दारों (मुसल्मानों) पर नाना प्रकार की कठिनाइयां पड़ने लगीं और नाना प्रकार के कष्ट उनको दिये जाने लगे। मुहम्मद साहब अपनी आंखों के सामने यह अत्याचार देखते किन्तु कुछ कर न सकते थे।

अपने अनुयायियों की यह दुर्दशा देखकर और उस समय इस प्रकार के अत्याचारों के रोकने में अपने को बिल्कुल असमर्थ पाकर उन्होंने यह राय दी कि, तुमने सत्य के मार्ग में अपने पैर रक्खे हैं। इन कष्टों की चिन्ता मत करो और ईश्वर का नाम लेकर अबीसीनिया की ओर चले जाओ। उनकी आज्ञा का पालन करते हुए बहुत से लोग अपने बाल-बच्चों के साथ अपना घर-द्वार छोड़कर अबीसीनिया को रवाना हो गये। इनके बाद और भी बहुत से लोगों ने इसी प्रकार देश परित्याग किया। इस देश-निकाले (जिलावतनी) को मुसल्मानों के इतिहास में हिजरत कहते हैं। यह घटना सन् ६१५ ई० की है।

जब कुरैश को यह समाचार मिला कि मुसलमान देश को त्याग चुके हैं तो उन्होंने वहां तक उनका पीछा किया। बहुत से राजदूत अबसीनीया के बादशाह के पास पहुँचे और वहां तक उन्होंने अपना अधिकार बतलाया कि ये हमारे दास गुलाम हैं और भाग कर आगये हैं। हमें इनकी गिरफ़ारी का अधिकार प्राप्त है।

अबीसीनिया के शाहने इन मुसल्मानों को अपने सम्मुख बुला कर जो कुछ इनके दुश्मनों ने कहा था सब कह सुनाया। इस पर जाफ़र बिन अबीतालिबने, जो हज़रत अलीके सगे भाई थे, शाह की सेवा में उपस्थित होकर अपना हाल इस प्रकार वर्णन करना आरम्भ किया,—

"ऐ शाह! हमारी दुर्दशा यह थी कि हम अन्धकार के कूप में गिरे हुए थे। हम मूर्त्ति-पूजक थे। मुर्दार वस्तुयें खाया करते थे। हमारे व्यवहार भी बहुत निन्दनीय थे। हमारे रस्म व रिवाज भी गन्दे थे। ईश्वर ने, जिसकी कृपा समस्त संसार पर फैली हुई है, हमारे जगाने के लिये मुहम्मद साहब को भेजा। उनकी वंश-श्रेष्ठता, सत्यप्रियता अथवा उनका चैतन्य हृदय और उनकी ईश्वरीय घटनाओं ने हमारे हृदय में स्थान कर लिया और हमने ईश्वरीय आज्ञाओं का पालन करना स्वीकार कर लिया कि, हम एक ही ईश्वर पर विश्वास करेंगे। किसी प्रकार की मूर्त्ति-पूजा न करेंगे। सदा सत्य बोलेंगे। किसी से विश्वासघात न करेंगे। अपने देश-भाइयों से भ्रातृ-भाव का नाता निबाहेंगे। पड़ोसियों के अधिकारों की रक्षा सदैव करेंगे। दीनों का माल न खावेंगे। स्त्रियों की प्रतिष्ठा करेंगे। पवित्रतामय जीवन व्यतीत करेंगे। ईश्वर की नित्य प्रति पूजा किया करेंगे और उसी के स्मरण में अन्नजल परित्याग कर देंगे। ईश्वर के नाम पर दीनों की सहायता करेंगे।

"ऐ शाह ! हम रसूल—पैग़म्बर—की यही शिक्षा है। हम-लोगों ने इस पर विश्वास किया है। उसकी शिक्षा को हमने स्वीकार किया है। उसी की आज्ञानुसार पत्थर का पूजना बन्द कर दिया है और केवल एक ईश्वर का भजन करना ही एक मात्र अवलम्ब है। इसी कारण हमारे कुरैश हमसे अप्रसन्न हैं। हमें नाना प्रकार के कष्ट इन लोगों ने दिये और हमारे कई भाई इन कष्टों से मृत्यु को प्राप्त हो चुके हैं। हमको इन्हीं कष्टों के कारण अपना घर-द्वार त्याग करना पड़ा है। इसी कारण हम मारे-मारे फिर रहे हैं। हमारे देश में हमारे रहने के लिये स्थान नहीं है। इसीलिये ए शाह ! हमलोगों ने तेरे राज्य की शरण ली है। हमें आशा है कि तू हमारा तिरस्कार न करेगा और हम ग़रीबों पर तेरे रहते किसी प्रकार का अत्याचार न होने पावेगा।" ..

जाफ़र ने करुणामय दृष्टि से शाह की ओर देखा। इस प्रार्थना से शाह का हृदय गद्गद् हो गया। उसने कहा कि अपने रसूल की कुछ शिक्षायें मुझे भी सुनाओ। जाफ़र ने सूरह मरियम की आयतें मनोहर ढंग से विषय में सुना डालीं और जब वे इन वाक्यों पर पहुँचे कि ए मरियम ! खुश होकर खा-पी और इन नन्हे बच्चों को देखकर अपनी आँखें ठण्डी कर। यह सुनते ही शाह अबीसीनिया का हृदय गद्गद् हो उठा। वह बोल उठा कि वह इसी सत्य की चिनगारी है जिसका प्रकाश मूसा पर पड़ा था। यह कह कर उसने उनको वापिस

भेजने से इन्कार किया और उनको अपने नगर और राज्य में रहने की आज्ञा दी।

शाह अबीसीनिया (नज्जाशी) को इस नये धर्म से घनिष्ठ प्रेम हो गया। वह ईसाई था, परन्तु साथ ही साथ मुसल्मानों का भी हितचिन्तक बन गया। यहाँ तक कि, अबीसीनिया मुसल्मानों के ठहरने का एक केन्द्रस्थल होगया।

इधर जब मुसल्मानों ने अपनी जान बचाकर अबीसीनिया में डेरा किया तब उधर मुहम्मद साहब अकेले कुरैश में उपदेश देते रहे। उन लोगों ने मुहम्मद साहब को तङ्ग करना शुरू किया। जब वे भोजन करने बैठते थे तब वे लोग उनके भोजन में कूड़ा-करकट गिरा दिया करते थे, किन्तु वे इसको किञ्चित् भी परवा न करते थे और अपना काम किये जाते थे। इस प्रकार से उनके काम में विघ्न उपस्थित हुआ करते परन्तु वे अपनी प्रतिज्ञा से नहीं टले। इसी समय में उनको एक बड़ी सफलता प्राप्त हुई। उनके चाचा हमज़ह और मक्के के एक प्रसिद्ध विद्वान् उमर ने इस्लाम धर्म को स्वीकार कर लिया। उमर के धर्म-परिवर्तन की कहानी बड़ी विचित्र है।

जब कुरैश मुसल्मानों को कष्ट देते-देते तङ्ग हो गया; तब एक मनुष्य ने, जिसका नाम इस्लाम धर्म के लोगों ने अबूजहल (मूर्ख) रक्खा था, सब कबीलों को एकत्रित किया और उनसे कहा कि बड़े दुःख व शर्म की बात है कि तुम्हारे पूर्वजों का निरादर हो और तुम्हारे धर्म को गालियाँ दी जावें, तिसपर भी

तुम्हारे हृदय पर इसका कुछ भी प्रभाव न पड़े! क्या एक मनुष्य को मारने की हिम्मत तुम लोगों में नहीं है, जिसने सारे पवित्र देश में आफ़त मचा रक्खी है? मुझसे यह निर्लज्जता नहीं देखी जाती। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ, जो कोई मुहम्मद को मार डालेगा (क़त्ल करेगा) उसे सौ ऊँट पारितोषिक के रूप में दिये जावेंगे। उमर का नाम उसकी बहादुरी के लिये प्रसिद्ध था। उसने भी सब के सामने यह विश्वास दिलाया कि मैं इस काम को अवश्य पूरा करूँगा। मैं उसका सिर काट कर ले आऊँगा। अबुजहल के द्वारा उमर काबे में लाया गया। वहाँ हुबल के सामने—जो क़ुरैश का सब से बड़ा देवता था—उसने इस बात की प्रतिज्ञा की और सौगन्ध खाई। उमरने भी उस बुत—मूर्त्ति—के सामने प्रतिज्ञा की कि जब तक मैं देश के इस शत्रु का नाश न कर लूँगा तब तक सुखपूर्वक विश्राम न करूँगा और तलवार भी हाथ से न छोड़ूँगा।

यह कह कर वह मुहम्मद साहब के घर की ओर चल पड़ा। उमर इन दिनों आप अपने एक मित्र के यहाँ रहता था। वह स्थान अच्छा और बड़ा था। वहाँ पर सब अनुयायी और नवदीक्षित मुसल्मान एकत्रित होते थे। वहाँ पर पूजा पाठ और ईश्वर की प्रार्थना आदि करते थे। जब उमर वहाँ पहुँचा तब सब लोग वहाँ इकट्ठे थे और उन्होंने द्वार की कुण्डी बन्द कर रक्खी थी। जब उन सब को उमर के आने का हाल मालूम हुआ तो वे लोग भय से काँप उठे।

उमर तलवार लिये हुए मुहम्मद साहब के मारने को बढ़ा। मार्ग में उसको भेंट एक मित्र से हुई। उसने उमर से पूँछा कि इस शीघ्रता के साथ कहाँ जारहे हो? उसने सब हाल कह सुनाया। उसने कहा, ए उमर! तू इस्लाम को जड़को काटना और उसके प्रवर्त्तक—बानी—को मारना चाहता है। तू यह नहीं जानता कि स्वयं तेरी बहिन और तेरे बहनोई मुसल्मान हो गये हैं। तुझे चाहिये पहले उन्हें क़त्ल कर। यदि तू न्याय के असली अर्थ को समझता है तो जा पहले अपने घर की ख़बर ले। यह सुनते ही कि, उसकी बहिन और बहनोई मुसल्मान हो गये हैं उसके शरीर में मानों आग सी लग गई। पहिले अपनी बहिन को ही उसने मारना निश्चित किया। बहुत शीघ्र वह अपनी बहिन के घर पहुँचा। द्वार बन्द था। भीतर उसकी बहिन और उसके बहनोई दोनों ही कुरान सुन रहे थे और नवदीक्षित मुसल्मान ख़बाब स्वयं पढ़ रहे थे। उमर ने द्वार पर धक्का मारा। यह सुनते ही बहनोई ने उसे झट किसी कोने में छिपा दिया। फिर बहिन ने उठ कर द्वार खोला और भाई को क्रोधग्रस्त देखकर वह डर गई।

जब बहिन ने देखा कि भाई मेरे प्राण लेने की इच्छा से आया है तब वह बोली,—"ऐ भाई! जिस बात को और जिस उपदेश को सुनकर हमलोगों ने अपने धर्मका परिवर्त्तन किया है उसे कृपाकर तुमभी सुन तो लो। यदि इसका प्रभाव तुम्हारे

हृदय पर न पड़े तो हम लोगोंके प्राण नाश करने का तुम्हें अधिकार है।

उमर को यह बात सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने कहा,—"अच्छा लाओ, वह पुस्तक मुझे भी सुनाओ।" उसी समय खुवाब बाहर निकाला गया और कुरान शरीफ़ की कुछ आयतों के पढ़ने की आज्ञा दी गई। उन्होंने सूरह पढ़ना आरम्भ किया। उसके सुनते ही उमर मुसल्मान होने को राज़ी होगया। जिन्हें मारने का उमर ने निश्चय किया था उन्हीं के मत को स्वीकार करने का उसने निश्चय कर लिया !!! उमर ने बहुत चाहा कि वह अपने को सम्हाले किन्तु वह ऐसा न कर सका।

उमर इसके उपदेश को सुनकर अपने आपे में न रहा। उसके मुँह से निकल पड़ा कि यह मनुष्यकृत वाक्य नहीं हैं। अवश्य ही ईश्वर ने उनको भेजा होगा। उसने अपनी भगिनी से कहा कि मुझे शीघ्र ही उसी रसूल मुहम्मद के पास ले चलो। तत्पश्चात् वे शीघ्र ही वहां पहुँचे जहां मुहम्मद साहब रहते थे। उमर का नाम सुनते ही मुसल्मानों के होश उड़ गये। वे द्वार को खोलना ही नहीं चाहते थे, परन्तु मुहम्मद साहब ने स्वयं उठ कर द्वार खोला और उसको देखते ही मुहम्मद साहब ने एक वाक्य उससे कहा,— "ऐ उमर ! तुम कब तक हमारे शत्रु बने रहोगे?" यह सुनते ही हज़रत उमर के नेत्र जलपूर्ण हो गये, हाथ से तलवार छूट कर गिर गई और वे अधीर हो गये। मुहम्मद साहब उन्हें

गले लगा कर इस प्रकार मिले जैसे कि दो वियोगी भाई दीर्घ काल के पश्चात् परस्पर मिलते हों।

नवदीक्षित मुसल्मानों में यह समाचार विद्युत् के सदृश फैल गया और वे परस्पर कहने लगे कि इस्लाम धर्म का घोर शत्रु उमर आज मुसल्मान हो गया। वह अपना ईमान खु़दा और उसके नबी पर ले आया है। जो मुसल्मान भय से कम्पित हो रहे थे, जिन बच्चों के माता-पिता उन्हें त्याग गये थे, अथवा जो स्त्रियाँ अपने पतियों के वियोग से व्यथित थीं और जिन विधवाओं के पालक अपना कर्त्तव्य नष्ट कर चुके थे, उन सब के हृदय-कमल आज खिल उठे।

इस वर्ष एक शोकपूर्ण घटना भी हुई। मुहम्मद साहब के चाचा और उनकी पतिव्रता स्त्री ख़दीजह इन दोनों ने इस लोक की यात्रा समाप्त कर दी थी। इन दोनों मृत्युओं के कारण मुहम्मद साहब को बड़ा शोक हुआ। अब उनका ऐसा कोई साथी न रहा जो कुरैश के अत्याचारों के समय उन्हें ढाढ़स बँधाता; परन्तु जिस तेज़ी के साथ उनकी निराशा बढ़ती जाती थी उसी तेज़ी के साथ उनका विश्वास ईश्वर पर दृढ़ होता जाता था। उन्हें यह निश्चय हो गया था कि वह—ईश्वर—सदा हमारा सहायक रहेगा। जो कुछ वह करता है, सब हमारे भले के लिये ही करता है। इसीसे उनका उत्साह बढ़ता गया और वे दृढ़ता से अपना काम करते रहे। जब

कुरेश उन्हें कष्ट देता था तब उन्हें अपने चाचा और पतिव्रता स्त्री की याद आ जाती थी।

अबूतालिब के मरने के बाद जब कुरेश ने इन्हें बहुत दुःख दिया तब इन्होंने वहाँ से उठकर तायफ़ में धर्म-प्रचार करनेका निश्चय किया। वे ज़ैद-बिन-हारिस को लेकर वहाँ गये, परन्तु वहाँ की जनता उनका उपदेश सुनते ही बिगड़ खड़ी हुई और उन्हें ठहरने तक को वहाँ स्थान नहीं मिला। उनके ऊपर पत्थर और ईंटों की वर्षा की गई और लड़कों को पीछे लगवा कर वे उसी समय नगर के बाहर निकलवा दिये गये। उनकी टिहुनियाँ, पिंडली और पैर आदि पत्थरों की चोटों से घायल होगये थे। वे थके-मांदे नगर से कुछ अन्तर पर खजूर की सघन छाया में विश्राम करने लगे। वे अपने घावों से खून पोंछते जाते थे और ईश्वर से प्रार्थना भी करते जाते थे।

"ऐ ईश्वर! मैं अपने दुःखों का हाल किसे सुनाऊँ? मुझमें धैर्य की शक्ति भी न्यून होती जाती है और कठिनाइयों के दूर करने का कोई उपाय भी प्राप्त नहीं होता है। लोगों में मेरा निरादर होता है। ऐ परमात्मा! तेरा नाम दयालु है। तू मुझ पर दया कर। तू दीनों का साथी है। मैं अत्यन्त दीन हो गया हूँ। तू ही संसार के अन्धकार का नाशक है। ऐसी शक्ति तेरे सिवा और किसी में नहीं पाई जाती। मुझ पर भी कृपा कर।"

मुहम्मद साहब को तायफ़ से तो लौटना ही पड़ा, किन्तु

इधर अब मक्के में भी एक नई आफ़त आ खड़ी हुई। उनके आने के पहिले ही मक्के में यह ख़बर फैल गई कि तायफ़ के निवासियों ने मुहम्मद को धक्के देकर निकाल दिया है। लड़कों ने उन्हें पत्थर मारे हैं। यहाँ भी तैयारियाँ होने लगीं कि मुहम्मद को मक्के में न घुसने देवें। यह समाचार मुहम्मद साहब को भी मिल गया कि उनकी विरुद्धता में इस प्रकार के विचार हो रहे हैं। वे मक्के में घुसने से हिचके। उन्होंने अपने मित्रों को; पूर्वपरिचित साथियों को और प्रतिष्ठित पुरुषों को लिखा कि, मैं आपकी शरण में आना चाहता हूँ। क्या ईश्वर के नाम पर मुझे आप स्थान देंगे? मैं आपलोगों को इस्लाम धर्मावलम्बी नहीं बनाना चाहता हूँ। मैं केवल यही चाहता हूँ कि, आप लोगों की सहायता से एक बार ईश्वरीय आवाज़ लोगों के कानों तक पहुँच जाय।

सब मित्रों और परिचित पुरुषों ने स्थान देनेसे इन्कार किया। किसी के हृदय में भाईबन्दी का विचार न उत्पन्न हुआ। केवल एक अरब जिसका नाम मुअत्तम बिन अदी था और जो इस्लाम धर्मावलम्बी न था, उसका हृदय इस प्रकार की निर्दयता के कारण अरब वालों से बिगड़ चुका था। उसने सब को बुलाकर समझाया कि अरबदेश आतिथ्य अथवा मेहमानदारी के लिये सदैव से प्रसिद्ध है। क्या हम अपने एक प्रतिष्ठित वंश-भाई के साथ अच्छा बर्ताव करते हैं? क्या यह लज्जायुक्त बात नहीं है कि हमारा एक भाई हमारे कट्टरपन

के कारण अपने घर में न आ सके ? यह कह कर वह ऊँट पर सवार हुआ और बड़े ज़ोर से चारों ओर घूमकर उसने कहा कि मैंने आज से मुहम्मद को अपनी शरण में लिया है। अब, जो मनुष्य उसका विरोध करेगा वह मेरा भी शत्रु कहलावेगा। सब लोगों ने पूछा कि क्या तुमने इसलाम धर्म स्वीकार कर लिया है? उसने उत्तर दिया,—'नहीं'। मैंने इसलाम धर्म को तो अपनाया नहीं है, किन्तु केवल आतिथ्य के सम्बन्ध से मैं उन्हें अपने साथ लाता हूँ।

यह कह कर मुअत्तम नगर से बाहर गया और वहां से बड़ी धूमधाम के साथ मुहम्मद को नगर में ले आया। उन्होंने लोगोंसे पूछा कि मुझे एक बार मक्के में काबे शरीफ़ का दर्शन कर लेने दो। लोगों ने उन्हें इस बात की आज्ञा दे दी। जब तक वे बैतुल अल्लाह का दर्शन करते रहे तब तक मुअत्तम उनकी रक्षा करते रहे।

काबे का दर्शन करके मुहम्मद साहब अपने घरको चले गये। जब वे फिर उपदेश करने लगे तब लोगोंने उन्हें और उनकी रक्षा करने वाले मुअत्तम को गाली देना आरम्भ किया। यह मुहम्मद साहब न देख सके और कहा,—"भाइयो ! अब मैं मुअत्तम की रक्षा में नहीं हूँ। मेरा रक्षक केवल ईश्वर है। आप नाहक़ उन्हें क्यों सताते हैं?" वे रात-दिन निडर होकर धर्म का प्रचार करते और अपने प्राण हथेली पर रखकर चारों ओर भ्रमण करते रहे। कुरैश के लोग भी उन्हें कष्ट देने

किञ्चित मात्र भी कसर नहीं रखते। वे अब यह उपाय करने लगे हैं, कि कोई नया आदमी मुहम्मद साहब से न मिलने पावे, न उनकी बातें सुनने पावे। उन्हें उपदेश देते समय वे लोग शोर गुल मचावें, जिससे उनकी बातें लोग न सुन सकें। इस बीचमें एक नई घटना और होगई। क़बीला दौस का एक नामवर सज्जन तुफ़ैल-बिन-उमर मक्के में आया। वहाँ के रईसों ने मुहम्मद के विरुद्ध बहुत सी बातें सुनाईं। उन्होंने अपना रोना रोया और बतलाया कि हमारे धर्म की यह निन्दा करता है। मक्के में धूम मचाये हुए है। जो उससे मिल जाता है वह उसी का हो जाता है। बड़े-बड़े वीर हमने उसके क़त्ल को भेजे, वे सब उसी के हो गये। घर-घर में उसके भाव और विचार फैल रहे हैं। घरों में लड़ाई चल रही है। कोई मूर्त्ति-पूजक है तो कोई खुदा-परस्त। आपसमें दोनों लड़ते और घर में हल्ला करते हैं। हमारे पूर्वजों को गाली देना इन धर्मावलम्बियों का ख़ास सिद्धान्त है।

तुफ़ैल इस प्रकार भड़काया गया कि वह मुहम्मद साहब का नाम भी नहीं सुनना चाहता था। उसने इस भय से कि कहीं मुहम्मद साहब के वाक्य उसके कानमें न चले जायँ अपने कानों में रुई लगा ली थी। एक बार कहीं चलते समय मुहम्मद साहब के उपदेश उसे सुनाई पड़े। वह उन उपदेशों के न सुनने की शक्ति न ला सका। उन उपदेशों में क्या जादू था सो तो ईश्वर जाने, किन्तु तुफ़ैल अपने को न रोक

सका। वह सीधे उसी स्थान पर जा पहुँचे जहाँ पर मुहम्मद साहब उपदेश दे रहे थे। हज़रत मुहम्मद की नमाज़ खतम भी न होने पाई थी कि बे-दीन तुफ़ैलने भी इस्लाम धर्म की शरण ली।

मुहम्मद साहब नमाज़ सम्पूर्ण करके अपने घर की ओर रवाना हुए। वे बहुधा ऐसाही किया करते थे। उन्होंने यह नहीं देखा कि कौन मनुष्य उनके पास खड़ा है। वह भी उनके पीछे-पीछे चला। मुहम्मद साहब जब घर पहुँचे तब उसने भी भीतर आने की आज्ञा माँगी। भीतर पैर धरते ही उसके मन के भाव बदल गये और उसने अपने हृदय को बाहर खोल कर रख दिया और एक अवलम्ब-हीन गरीब के पैरों को चूमने लगा।

यह बड़ी भारी सफलता थी। चारों ओर यह चमत्कारिक समाचार फैल गया और इस्लाम धर्मका बीज एक ज़िले से दूसरे ज़िलेमें बोया गया। इस प्रकार स्थान-स्थान पर इस्लाम धर्म फैलने लगा।

इस समाचार के पाते ही विदीर्ण-हृदय मुसल्मानों के हृदय सम्हले। उनका मुख-कमल खिल गया। कुरैश की निराशा सीमा पार कर गई। तुफ़ैल तो अपने स्थान पर चलता बना। इधर मुसल्मानों पर नाना प्रकारके दारुण अत्याचार होने लगे। मुहम्मद साहब के सब मित्र उनके विरुद्ध हो गये। वे लोग अपने मुसल्मान पड़ोसियों

के साथ अच्छा बर्ताव नहीं करते थे, यह देखकर वे बड़े उदास रहते। आपके एक लड़की थी। पिता को दुःखी देख कर उसका भी हृदय पिघल जाता था। वह रोने लगती थी। कूड़ा-करकट लेजाने वाले मनुष्य आपके ऊपर कूड़े का टोकरा उलटा दिया करते थे किन्तु आप लाचार होकर घर चले आते। फ़ातमा बाप के चेहरे को साफ़ करती थी। एक दूसरे को देखकर दोनों के प्रेमाश्रु भर आते और फिर ईश्वर को याद करके वे अपने दुःखों को भूल जाते थे। इनके सबसे मुख्य मित्र का नाम अबूबकर था। वे सदैव मुहम्मद साहब को उदास देखा करते। वे चाहते थे कि मुहम्मद साहब की उदासी दूर हो जाय। इस हेतु, उन्होंने अपनी लड़की आयशा के साथ विवाह करने के लिये मुहम्मद साहब को राज़ी किया और मुहम्मद साहब इस सम्बन्ध से राज़ी हो गये। सगाई, जिसे मँगनी कहते हैं, होगयी। अब इससे अबूबकर दृढ़ता से मुहम्मद साहब के मित्र और सहायक तथा सम्बन्धी हो गये।

इसी अवसर में मक्के की एक स्त्री, सौदह, ने इसलाम-धर्म को स्वीकार किया और उसने अपने पति को भी इस धर्म का अनुयायी बनाया। जब इन दोनों पर अत्याचार होने लगे तब इन्हें भी देश-त्याग करना पड़ा। अन्तमें लाचार होकर यह स्त्री अपने पति के साथ घर-द्वार छोड़ कर दूसरे देश को चली गई। ये विदेश में अपने साथी देश-भाइयों

से, जो घर को परित्याग करके धर्म का पालन कर रहे थे, आ मिले। कुछ दिनों के बाद इस मध्यमावस्था की स्त्री का पति स्वर्गवासी हो गया। अब यह अनाथ होगई। किसी ने इसे मक्के तक पहुँचा दिया। उसने मुहम्मद साहब से विवाह करने की प्रार्थना की। इसके पहिले उनका विवाह आयशा से हो चुका था। सौदह ने इतना ज़ोर दिया कि मुहम्मद साहब को नाहीं करना असम्भवसा हो गया। इब्राहीम और हज़रत मूसा ने भी एक से अधिक ब्याह किये थे, इसलिये वे इन्कार न कर सके। सौदह ने साफ़-साफ़ कह दिया कि मेरी अवस्था विवाह करने की नहीं है और न मुझे ब्याह करने की इच्छा ही है, परन्तु मैं चाहती हूँ कि आप मुझे अपनी सेवा में लेना स्वीकार कर लें। इसके पश्चात् मुहम्मद साहब का ब्याह सौदह के साथ हो गया।

इस समय इसलामी इतिहास में एक उल्लेखनीय घटना होगई। एक दिन आप ब्यौपारियोंको उपदेश दे रहे थे, उनके साथ बहुत से यात्री और मदीनेके रहने वाले छः पुरुष भी थे। मुहम्मद साहब ने उन्हें भी इसलाम धर्मका उपदेश दिया। वे इनके उपदेश को सुनकर मुसलमान हो गये। मदीने में पहुँचते ही इन्होंने बड़े उत्साह के साथ यह समाचार फैला दिया कि मक्के में एक पैग़म्बर खुदा पैदा हुआ है। वह सदियों के झगड़ों को मिटा रहा है और मूर्त्ति-पूजा को नष्ट कर रहा है। उसके उपदेश सचाई से भरे हुए हैं। दूसरे वर्ष यही लोग और

दूसरे लोगों को लेकर मक्के में पहुँचे और वे भी मुसल्मान हो गये। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि हम चोरी न करेंगे। एक खुदा पर ईमान लावेंगे और व्यभिचार से दूर रहेंगे। अपनी निरपराधिनी लड़कियोंको जीते जी न मारेंगे और स्वच्छ-हृदय से पैग़म्बर का साथ देंगे।

तत्पश्चात् जब वे मदीने को वापिस चले तब मुहम्मद साहब ने एक उपदेशक उनके साथ भेज दिया। उसके वहाँ पहुँचते ही दीन इस्लाम का प्रचार बड़ी शीघ्रता के साथ होने लगा।

इसी बीच में जब कि मक्के में मुहम्मद साहब के विरोधी लोगों में द्वेष की आग जल रही थी अन्य प्रान्तों में चारों ओर पैग़म्बर के आने की खुशखबरी फैल रही थी। मक्के में सभी उनको झूठा बतलाते थे, किन्तु चारों ओर के मनुष्य उनपर विश्वास करने लगे थे।

मुसल्मानों की धर्म-पुस्तकोंमें लिखा है कि एक दिन मुहम्मद साहब बुर्राक़ पर बैठ कर ईश्वर के न्यायालय में पहुँचे और उन्होंने स्वर्ग की दशा को स्वयं आँखों से देखा। किसी-किसी का कहना है कि वह इस शरीर के साथ ईश्वर से मिलने नहीं गये थे। वह पर्दा ही दूसरा था, जिसमें ये दोनों परस्पर मिले थे।

सन् ६२२ ई० में मदीने के ७५ मुसल्मान एक क़ाफ़िले के साथ मक्के में पहुँचे। एक सुनसान रात में वह मुहम्मद साहब से मिले और उन्होंने सच्चे हृदय से इस्लाम धर्म

स्वीकार किया और उन्हें मदीने चलने की सलाह दी। उन्होंने कहा कि इस्लाम धर्म को स्वीकार करने और मुझे मदीना ले चलने में तुम पर बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ और आफ़तें पड़ेंगी। परन्तु उन्होंने विश्वास दिलाया कि हम सदैव आपका साथ देंगे। हम आपके दास बन कर रहेंगे। आप हमारे नगर को पवित्र करें।

मुहम्मद साहब ने इस बात को बड़ी प्रसन्नता के साथ स्वीकार किया। मक्के का कुरैश कहीं इस बात को सुन रहा था। उसने झट आकर कुरैश को ख़बर दी। वे शीघ्र ही मदीने के क़ाफ़िले में पहुँचे और उन आदमियों को जिन्होंने इस बात की प्रतिज्ञा की थी डाँटा। परन्तु यह क़ाफ़िला इनके आने के पहिले ही मदीने को चला गया था।

कुरैश के अत्याचारों से तङ्ग आकर मुहम्मद ने अपने मुसल्मान भाइयों से कहा, कि तुम एक-एक करके मक्के को छोड़ कर मदीने को चले जाओ। थोड़े ही दिनों में प्रायः १०० मुसल्मान अपने अपने रिश्तेदारों को लेकर मदीने को चले गये। केवल तीन ही मुसल्मान मक्के में रह गये अर्थात् मुहम्मद, अली और अबूबकर। इनका कुटुम्ब भी इनके साथ ही रह गया। आधा मक्का उजाड़ व वीरान होगया।

यह सब कुरैश सहन न कर सके। एक के बाद एक उनके सब षड्यन्त्र साज़िशें व्यर्थ और निष्फल हो गईं। अब उन्होंने अपने दारुलनदूह में आस-पास के क़बीलों को

मनुष्य-समुदाय आपके साथ उपस्थित था। मदीनेके कोठों पर स्त्री पुरुष और बालक आपके दर्शनों की प्रतीक्षा कर रहे थे। आप ऊँटनी पर सवार होकर लोगों के सलाम लेते हुए आगे बढ़ रहे थे। प्रत्येक मनुष्य यही चाहता था कि मुहम्मद साहब हमारे ही यहाँ ठहर जायँ। आप हँसते हुए ऊँटनी की नकेल छोड़ कर कहने लगे,—"जहाँ यह ठहर जावेगी हम भी वहीं उतर पड़ेंगे।" अन्त में वह ऊँटनी एक ग़रीब मनुष्य के द्वार के सामने जा बैठी! उसका नाम अय्यूब अनसारी था। वह झट मुहम्मद साहब का सामान उठाकर अपने घर में लेगया और उसने अपने को बड़ा धन्य माना।

हमारे घरमें वह आएँ खुदा की कुदरत है।
कभी हम उनको कभी अपने घरको देखते हैं॥

तीसरा परिच्छेद।

मदीने में धर्म का प्रचार और बदर की लड़ाई।

मुहम्मद साहब जब मदीने में पहुँचे तब उन्हें ज्ञात हुआ कि जो लोग मक्के से यहाँ आये हैं वे जल-वायु के परिवर्तन के कारण बहुत दुःखी हैं और मदीने के लोग उनकी सहायता नहीं करते। एक दिन सबको एकत्रित करके आपने बड़ा प्रभावशाली उपदेश दिया। इस उपदेश का इतना अच्छा प्रभाव पड़ा कि वे लोग उन्हें अपने भाई के समान समझने लगे और उनकी सहायता के लिये प्रस्तुत होगये।

इन्होंने मदीने में एक इबादतगाह—प्रार्थनालय—बनाने का निश्चय किया। इसके लिये इन्होंने वही स्थान अच्छा समझा जहाँ पर इनकी ऊँटनी पहिले बैठी थी। यह भूमि दो यतीम--अनाथ--लड़कों की थी। वहाँ एक पुराना क़ब्रिस्तान—श्मशान—था। चन्दा करके उन अनाथ बालकों को उस भूमि की क़ीमत दीगई। उन्होंने क़ीमत नहीं ली, परन्तु

शुभकार्य में सम्मिलित होना अपना गौरव समझा। तत्पश्चात् प्रार्थनालय बनने का काम आरम्भ हो गया। सब मुसलमान मिलकर काम करते थे। स्वयं मुहम्मद साहब भी सब के साथ ईंटों को ढोते थे और उसके बनाने में अपने हाथों के द्वारा सहायता पहुँचाते थे। यह मस्जिद कच्चे गारे और कच्ची ईंटों की बनाई गई। इसकी बनावट भी साधारण थी। सरकियों के स्थान में खजूर के पत्तों की छत बनायी गई। मुहम्मद साहब बिना मुम्बर* के कभी बैठकर और कभी खड़े होकर उपदेश—वाज़—देते थे। कुछ समय के बाद यहाँ मुंबर भी बनवा दिया गया जिसकी तीसरी सीढ़ी पर खड़े होकर मुहम्मद साहब उपदेश करने लगे। एक दिन आपने दान—खैरात—के विषय में उपदेश दिया:—

"जब ईश्वर ने पृथ्वी को पैदा किया तब वह थरथराने और काँपने लगी। उसे इससे बचाने के लिये ईश्वर ने पृथ्वी पर पहाड़ रख दिये। तब ईश्वर से फरिश्तों ने पूँछा कि रब्बुल-आलमीन! क्या इन पहाड़ों से भी कोई भारी पदार्थ है? उत्तर मिला—हाँ, लोहा इनसे भारी है, क्योंकि वह पहाड़ के पत्थरों को तोड़ डालता है। फिर उनलोगों ने ईश्वरसे पूँछा कि लोहे से भी अधिक दृढ़ पदार्थ है? उत्तर मिला—अग्नि, जो लोहे को पिघला देती है। फिर उन्होंने पूँछा कि आग से भी

* मस्जिद में एक सीढ़ी होती है जहाँ बैठकर लोग उपदेश देते और अज़ान देते हैं।

अधिक कोई चीज़ इस दुनिया में है ? उत्तर मिला—पानी, जो आग को भी बुझा देता है। फिर उन्होंने पूछा इससे भी अधिक दृढ़ कौनसा पदार्थ है ? उत्तर मिला—हवा। क्योंकि वह पानी को उछाल कर फेंक देती है। और फिर उन्होंने पूछा कि इससे भी अधिक दृढ़ कौन सी चीज़ है ? उत्तर मिला—मनुष्य का दिया हुआ दान—खैरात—जो यदि दाहिने हाथ से दिया जाय तो बायें को न मालूम हो।"

मुहम्मद साहब की दृष्टि में दान और प्रेम एक ही वस्तु थी। प्रत्येक अच्छा काम एक प्रकार का दान है। मनुष्यों का प्रेमभाव से मिलना भी दान है। भूले को पथ दिखाना, अन्धोंकी सहायता करना, मार्ग से कंकड़ और कांटे हटा देना, और तृषित की तृष्णा शान्त करना आदि दान हैं। किसी मनुष्य के मरने के पश्चात् सब लोग उसके कुटुम्बियों से यही पूछते हैं कि वह कितना धन छोड़ गया; किन्तु फरिश्ते उससे पूछते हैं कि तूने दुनियां में कितने और कौन-कौन से अच्छे काम किये हैं। इस उपदेश को सुनकर बहुत से यहूदियों और नसरानियों ने भी आप पर विश्वास किया और मुसल्मान हो गये।

मुहम्मद साहब ने देखा कि इस्लाम धर्म चन्द्रकला की नाईं दिन प्रति दिन उन्नति कर रहा है, इससे उन्हें बड़ा सन्तोष हुआ। यद्यपि आपने सौदह से विवाह कर लिया था, किन्तु उन्हें वह सुख और आराम नहीं था जो कि एक गृहस्थ को

होना चाहिये। उधर अबूबकर को अपनी बेटी का ध्यान था। अन्त में अब उन्होंने आयशा का विवाह (दो वर्ष हुए जिसकी मँगनी हो चुकी थी) मुहम्मद साहब के साथ कर दिया। कुछ समय के बाद मुहम्मद साहब की बेटी फातमा का व्याह अली से हो गया। इस समय अली की आयु २२ वर्ष की थी और फातमा की १५ वर्ष की थी। यह विवाह बड़ी साधारण रीति से हुआ था। इसमें किसी प्रकार का तमाशा अथवा टीम-टाम नहीं रखा गया। मुहम्मद साहबने निम्न-लिखित दहेज़ अपनी बेटी को दिया था। दो इज़ार, एक चक्की, दो मिट्टी के घड़े, एक मिट्टी का लोटा, और एक बिस्तर।

मुहम्मद साहब के घर का प्रबन्ध भी साधारण था। आयशा का कहना है कि हम एक एक मास तक चूल्हा नहीं जलाती थीं। हज़रत मुहम्मद खजूर खा कर और पानी पीकर अपना निर्वाह करते थे। यदि कोई हमारे यहाँ माँस भेज देता तो हम उसे पका लेती थीं और रोटी के लिये आटा न रहने के कारण केवल माँस ही खाकर हम लोग अपना दिन पार कर देते थे। मुहम्मद साहब बहुधा जौ की रोटी खाया करते थे और कभी कभी ऊँटनी का दूध पीलेते थे। मुहम्मद साहब स्वयं अपने घरका काम करते थे। यहाँ तक कि भाड़ना, आग सुलगाना, फटे-पुराने कपड़े आदि स्वयं आप सी लेते थे। मुहम्मद साहब ने सौदह और आयशा

के लिये अलग-अलग घर बना दिये थे और प्रत्येक के घर में बारी-बारी से रहते थे।

इसलाम धर्म का खूब प्रचार होने लगा। मुहम्मद साहब की शिक्षा को यहूदी और नसरानी भी मानने लगे। ये लोग सांसारिक कार्य्यों में भी इनकी राय लेते और इनके कहे अनुसार काम करते थे। इन्हें विश्वास हो गया था कि मुहम्मद साहब ईमानदार मनुष्य हैं। हम उनके धर्मको चाहे न मानें किन्तु उनके बड़प्पन (बुज़ुर्गी) से इनकार नहीं कर सकते। मुहम्मद साहब ने इन सबको एकत्रित किया और आपस में सबको एक जाति और एक राष्ट्र बनाने का उपदेश दिया। उन्होंने फूट की बुराइयों का उल्लेख किया और बतलाया। सबको आपस में भ्रातृ-भाव रखने और एक दूसरे के अधिकारों की रक्षा करने के लिये उपदेश किया। जो तुममें से एक का शत्रु है उसे सबका शत्रु समझना चाहिये। यदि तुममें से किसी का भी अधिकार छिन गया हो तो तुम सब मिलकर उसे उसका अधिकार दिलाओ। जो झगड़ा तुम आपस में तय नहीं कर सकते हो, उसे पैग़म्बर पर छोड़ दो। उसके न्यायको मानो और परस्पर की लड़ाई का त्याग करो। इस बातको सबने स्वीकार किया। यहाँ तक कि यहूदी और नसरानी लोगोंको भी यह बात अच्छी मालूम हुई।

उन दिनों मदीने में अब्दुल्ला बिन उब्बी नाम का एक पुरुष रहता था। इसको यह आशा थी कि एक न एक दिन

मैं मदीने का राजा हो जाऊँगा। जब उसने देखा कि समाज का ध्यान मुहम्मद की ओर आकर्षित है तब उसने मुहम्मद साहब के विरुद्ध अपना कार्य्य आरम्भ किया। उसने मक्केके क़ुरैशों के पास समाचार भेजा। जब क़ुरैशों को मालूम हुआ कि दिनों दिन मुसल्मानों की नीव दृढ़ होती जाती है तब वे लोग बहुत शङ्कित हुए। अब्दुल्लाने उन्हें धैर्य दिया और कहा कि यदि तुम मदीने पर आक्रमण करोगे तो यहूदी तुम्हारी सहायता अवश्य करेंगे।

माह रज्जब (नवम्बर सन् ६२३ ई०) में यह समाचार मदीने में पहुँच गया कि मक्के में मदीने के मुसल्मानों के नष्ट करने के लिये बड़ी-बड़ी तैयारियाँ हो रही हैं। बहुत शीघ्र ही उन पर आक्रमण होने वाला है। इसी अवसर में क़ुरैश का एक क़ाफ़िला शाम की ओर बढ़ा और यह निश्चय हुआ कि वह क़ाफ़िला उत्तर से और मक्का-निवासी दक्षिण से मदीने वालों पर आक्रमण करें।

इन लोगोंने मुसल्मानों को नष्ट करने का निश्चय कर लिया था। इस समाचार को सुनते ही मदीने में बड़ी घबराहट उत्पन्न हो गई और उनकी दशा शोचनीय हो गई। वे लोग सबकी दया के पात्र थे और अपना घर-द्वार छोड़ कर परदेश में मारे-मारे फिर रहे थे। यदि उनका कोई अपराध था तो केवल यही कि, वे मूर्त्ति-पूजा को छोड़ कर एक ईश्वर की पूजा करने को तय्यार हो गये थे।

अन्तमें निराशा और भयने मुसलमानोंको साहसी बना दिया। अब वे निडर होकर सब प्रकार की कठिनाइयोंके सहन करने को प्रस्तुत हो गये। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि हम भी कहीं न जावेंगे और धर्म पर अपने बाल-बच्चोंको न्योछावर करने को तैय्यार रहेंगे। सत्य के लिये और धर्म के लिये हम अपना सिर कटवावेंगे। इन्होंने निश्चय कर लिया कि मक्के की ओर न बढ़ कर शाम की ओर से आने वाली शक्ति—काफ़िले—को रोकें।

इसी रायके अनुसार ३१४ उत्साही और निडर मुसलमान अपने-अपने प्राण हथेलियों पर रख कर अपने-अपने घरों से निकल पड़े। इस बातको इन्होंने बिलकुल छिपा हुआ रखना चाहा, किन्तु शामके काफ़िले के सर्दार अबूसुफ़िया को यह समाचार मिला कि मुसलमान भी मरने मारने को तैयार हैं। इसी लिये उसने मक्केको अपने सवार उसी समय दौड़ाये और विशेष सहायता माँगी। थोड़े ही समय में एक हज़ार जंगी सिपाही काफ़िले की सहायता के लिये आ पहुँचे, किन्तु इस सहायता के पहिले ही अबूसुफ़िया का काफ़िला मक्के पहुँच गया। अबूजहल समझाया गया कि वह लौट जाय, परन्तु यह राज़ी न हुआ। उसने कहला भेजा कि जब तक मुहम्मद का नाम मैं सफ़हये-हस्ती से न मिटा दूँगा और जब तक मैं उसके धर्मकी समूल नष्ट न कर दूँगा तब तक मैं वापिस नहीं लौटूँगा।

अबूजहल इस प्रकार आत्म-प्रशंसा करता हुआ बदखे में पहुँचा। यहाँ मुसल्मानों के डेरे लगे हुए थे। मुहम्मद साहब ने ईश्वर से यह आशीर्व्वाद माँगा कि हे ग़रीब-निवाज़, सर्वरक्षक स्वामिन्! तू अपनी सहायता भेज। हे विदीर्ण-हृदयोंके शान्तिदायी! यदि ये थोड़ेसे ईमानदार (मुसल्मान) मारे जावेंगे तो फिर तेरी पूजा करने वाला कोई न रह जायगा।

युद्धके साज दोनों ओर से आरम्भ हुए। पहिले-पहल तीन वीर कुरैश की ओर से युद्ध-स्थल में आये और उन्होंने मुसल्मानों को ललकारा। मुसल्मानों की ओर से हमज़ह, अली, अबीदह उनका सामना करने को निकले। उस समय ऐसे अवसर पर इस प्रकार के ही युद्ध हुआ करते थे। दोनों ओर के मनुष्य युद्ध देख रहे थे। इतने में इस्लाम की ओर के डंके बजने लगे। मालूम हुआ कि तीनों शत्रु मार डाले गये। मक्केके तीन वीरों का युद्ध स्थल में काम आना था कि युद्धकी स्थिति बदल गई और घमासान युद्ध होने लगा। युद्ध की प्रचण्डता और भयंकरता कुछ और की औरही हो गई। मक्के वालोंके पास अच्छी-ख़ासी लड़ाकू फ़ौज और पूरा-पूरा सामान था। इधर बेचारे मदीने के मुसल्मान परदेश यात्री थे। समय के मारे हुए इन लोगोंके पास कुछ भी न था। शीत की प्रचंडता भी प्रशंसनीय थी। आकाश में मेघ छाये हुए थे। आकाश श्यामल घटाओं से चहुंदिश घिरा हुआ था। इधर आंधी

करती थी कि वे सबसे शक्तिशालिनी हैं। विद्युत् की भयङ्कर गड़गड़ाहट और चमक भी अपना कर्तव्य पालन कर रही थी। उस समय ऐसा प्रतीत होता था कि मानो प्रकृति की सम्पूर्ण शक्तियां मक्का-निवासियों की सहायतार्थ मोर रूप धारण करके समराङ्गण में आ रही हैं। भयंकर युद्धके पश्चात् मक्केवालों की हार हुई और मुसल्मान विजयी हुए। समरभूमि पर मुसल्मानों का अधिकार हो गया। बहुत से कुरेशोंने अपनी संसार-यात्रा इस प्रकार पूरी की और बहुत से बन्दी हुए।

कुरेश के जितने मनुष्य पकड़े गये थे, उनमें से दो ऐसे थे कि जिनका छोड़ना मनुष्य मात्रके लिये हानिकारक था; इसलिये वे क़त्ल किये गये। शेष बन्दीजनोंको क्षमा प्रदान की गई और वे लोग छोड़ दिये गये। उनमें से कईने प्रतिज्ञा की कि हम आगे कभी मुसल्मानोंको कष्ट न देंगे। इस युद्ध में कुछ विद्वान् भी बन्दी किये गये थे, परन्तु वे लोग इस शर्त पर छोड़े गये कि मदीने में कुछ समय तक मुसल्मानों के लड़कोंको पढ़ावें और फिर अपने देश को लौट जायँ। मुसल्मानों को भी सूचना दी गई कि ये विद्वान् बन्दी—क़ैदी—न समझे जायँ। इनका आदर और प्रतिष्ठा की जाय। जब तक ये क़ैदी मदीने में रहे तब तक मुसल्मानों ने इन्हें किसी प्रकार का कष्ट नहीं दिया। एक क़ैदी जो मदीने से छूट कर सबसे पहिले मक्के में आया था उसने मदीने वालों

पर अपनी राय इस प्रकार प्रकट की कि ईश्वर उनका भला करे! वे लोग हमें चढ़ने को सवारी देते थे और स्वयं पैदल चलते थे। वे हमको गेँहू की रोटी खिलाते थे और स्वयं खजूर खाकर अपना निर्वाह करते थे।

मुसल्मान सिपाहियों में लूट का माल बाँटने के विषय में झगड़ा हो गया; किन्तु मुहम्मद साहब ने उसे पूरी फ़ौज में बराबर बराबर बाँटने की आज्ञा देदी। झगड़ा भी एकदम बन्द हो गया। शत्रु के माल पर मुहम्मद साहब को यह आज्ञा हुई कि इस का पाँचवाँ भाग ईश्वरार्थ अलग रख दिया जाय, जो निर्धनों और ग़रीबों की सेवा में खर्च हो और शेष के चार भाग सब को बराबर-बराबर बाँट दिये जायँ।
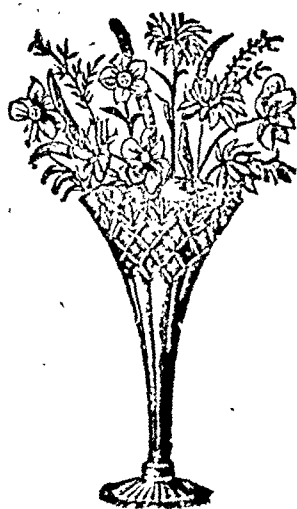
चौथा परिच्छेद।

कुरैश का मदीने पर धावा
और
अहद का संग्राम।

इस जीत से मुसल्मानों को बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने अपने विजय प्राप्त करने का समाचार मदीने को भेज दिया। उसी दिन मुहम्मद साहब की पुत्री रुकियह का स्वर्गवास होगया, जिससे मुहम्मद साहब को बड़ा दुःख हुआ। इसके कुछ दिनों के पश्चात् उनकी ज्येष्ठ पुत्री ज़ैनब, जो अब तक कुरैश लोगों के अधिकार में क़ैद थी, बड़ी कठिनता के साथ मदीने पहुँचाई गई। इसके आने से आपका दुःख बहुत कुछ हल्का होगया।

उधर कुरैश बहुत ही लज्जित हुआ था। वह किसी प्रकार अपनी हार का बदला लेना चाहता था। और उसी धुन में लगा हुआ था।

एक दिन मुहम्मद साहब किसी वृक्ष की छाया में सो रहे थे कि इतने में एक कुरैश वहां से निकला। उसने मुहम्मद

साहब को सोते हुए देखकर सोचा कि समय अच्छा है, आओ! मुहम्मद साहब को संसार-यात्रा समाप्त करदें। फिर ईश्वर की प्रेरणा ने उसके चित्त के भाव को बदल दिया और वह सोचने लगा कि सोते हुए को मारना धर्म नहीं है। उसने आप को उठाया और मरने के लिये तैयार हो जाने के लिये आदेश किया। मुहम्मद साहब ने उत्तर दिया कि तुम ठीक कहते हो, किन्तु हमारा रक्षक ईश्वर है। इतना कहते ही वह मूर्च्छित हो गया और उसके हाथ पैर थर्रा गये और तलवार हाथ से छूट कर पृथ्वी पर गिर गई। मुहम्मद साहब ने शीघ्रता से तलवार उठा कर कहा,—"कहो, अब तुम्हारा बचानेवाला कौन है?" उसने उत्तर दिया,—"कोई नहीं।" मुहम्मद साहब ने कहा,— "उस ईश्वर को याद कर" और यह कहकर उसकी तलवार उसे वापिस दे दी। उस पर मुहम्मद साहब के बर्ताव का इतना अच्छा प्रभाव पड़ा कि वह मुसल्मान हो गया और सदैव के लिये उनका अभिन्न मित्र बन गया।

उस्मान को अपनी स्त्री रुक़ियह के मरने का बड़ा दुःख हुआ। उसके दुःख को दूर करने लिये उमर ने चाहा कि अपनी पुत्री का विवाह उसके साथ कर देवे, किन्तु उस लड़की का स्वभाव बहुत कठोर था और कोई भी मनुष्य उसके साथ विवाह करने को राज़ी न होता था। उस्मान ने भी इस प्रस्ताव को अस्वी[illegible]गा। [illegible] को बड़ा दुःख

हुआ। अपनी बेटी के विवाह की चिन्ताग्नि में वह जला करते थे। एक दिन अपना हाल उन्होंने मुहम्मद साहब से कहा। आपने उत्तर दिया कि तुम चिन्ता मत करो। ईश्वर तुम्हारी पुत्री को उस्मान से अच्छा पति देगा और उस्मान को उससे अच्छी स्त्री देगा। कुछ दिनों के बाद मुहम्मद साहब ने स्वयं हिफ़ज़ा से विवाह कर लिया और अपनी पुत्री (उम्मान कुलसूमकी) का विवाह उस्मान के साथ कर दिया। इससे दोनों अर्थात् उस्मान और उमर मुहम्मद साहब के सदा सहायक बने रहे। कहते हैं कि कुरानमजीद की जो आयतें आकाश से उतर कर आती थीं वे लिखवाई जाकर कंठाग्र कराई जाती थीं। अबू-सफ़ियाँ मक्के की हार के बाद बहुत लज्जित हुआ। यहाँ तक कि वह घर से नहीं निकलता था। उसकी स्त्री हिन्दा उसे रात-दिन भला-बुरा कहती और उसे लज्जित करती थी; क्योंकि उसका बाप, एक चाचा और भाई बदरकी लड़ाई में मारे गये थे।

स्त्री के ताने सुनते सुनते उसका जोश उमड़ आया और उसने निश्चय किया कि इस लज्जित भाव से रहने की अपेक्षा मर जाना अच्छा है। उसके हृदय की आग बिना उसके सम्बन्धियों का बदला लिये नहीं बुझ सकती थी। यह सब सोच विचार कर उसने इस बार ३००० लड़ाकू वीरों को एकत्रित किया। यह समाचार मदीने पहुँचा। मुहम्मद साहब की राय हुई कि मदीने को रक्षित रखकर यहीं ठहरे रहें और

शत्रुओं के आक्रमण को रोकें। परन्तु अनुभवी पुरुषों की राय इसके विपरीत थी। नवयुवकों ने कहा कि हम खुले मैदान में उन लोगों का सामना करेंगे। मुहम्मद साहब को भी यही राय माननी पड़ी। सब तय्यार होकर बाहर निकले। सब मुसल्मानों की सेना मिलकर १००० हुई, जिनमें से ३०० यहूदी थे। इन पर मुसल्मानों का भरोसा न था, इसलिये ये सब लौट आये। केवल सात सौ मुसल्मान शेष रह गये। इन बेचारों के पास केवल दो घोड़े और शेष तीरन्दाज़ थे। इस सेना ने अपना डेरा उहद की पहाड़ी पर, जो मदीने से ६ मील की दूरी पर थी, जमाया और उधर से क़ुरैश की तीन हज़ार सेना बढ़ती हुई आगई। जब यह सेना पहाड़ी के पास पहुँची तब मालूम हुआ कि मुसल्मान यहाँ पर पड़े हैं। उन्होंने भी दूसरी ओर सामने सेना डाली। प्रातःकाल मुसल्मान जब नमाज़ से निवृत्त हुए तब शत्रुओं को उन्होंने देखा। शत्रु-सैन्य की संख्या को देखकर ये लोग घबरा गये किन्तु मुहम्मद साहब ने इनको धैर्य और साहस दिया। उसी अवसर में शत्रु-सैन्य भी समराङ्गण में डट गई। उन्होंने एकदम मुसल्मानों पर आक्रमण किया; किन्तु मुसलमानों ने उन्हें ख़ूब रोका। फिर क्या था, घमासान युद्ध आरम्भ होगया।

मुसल्मान जीत चुके थे, किन्तु अपनी ही चूक से उन्होंने हार खाई। बड़े-बड़े योद्धा सदैव के लिये अपनी कीर्त्ति-कौमुदी का विकाश कर गये! मुहम्मद साहब भी घायल हो गये थे।

चारों ओर यह समाचार फैल गया कि हज़रत मारे गये, किन्तु भाग्य-वश आप मारे न गये थे। उनकी ही शकल-सूरत का दूसरा व्यक्ति मारा गया था। मुहम्मद साहब घायलों के मध्य में पड़े हुए थे। लोग उन्हें उठा कर लाये और ऊँटनी का दूध पिलाया। इस युद्ध में बहुत से वीर मुसल्मान काम आये। हमज़ाह शहीद हुए, परन्तु मुहम्मद साहब के मुँह पर एक तीर और एक पत्थर लगा था, जिससे उनका एक दाँत टूट गया।

हिन्दह युद्ध के बाद युद्ध-स्थल में आई और अपने हाथ से उसने हमज़ाह के मृतक शरीर के खण्ड-खण्ड किये। उनका कलेजा निकाल कर अपने दाँतों से चबाया। उनके नाक और कान काट लिये और अन्य मुसल्मानों के मृतक शरीरों का भी यही हाल हुआ।

जब कुरैश अपने डेरे पर चले गये तब रात्रि के समय मुहम्मद साहब अपने साथियों के साथ मैदान में आये और अपने चाचा हमज़ाह की लाश को देखकर बहुत दुःखी हुए। एक मुसल्मान इतिहासकार लिखता है कि वह जोश में आकर ऐसा कहने वाले ही थे कि कुरैश के मृतक शरीर के साथ भी ऐसा व्यवहार किया जाय जैसा कि हमज़ाह के साथ उन्होंने किया। उसी समय 'वही' नाज़िल हुई और उसने आपको ऐसा करने से रोका।

अबू सफ़ियां को जब मालूम हुआ कि मुहम्मद साहब अभी

तक जीवित हैं तो उसे बड़ा क्षोभ हुआ। वह जानता था कि यदि वे फिर युद्ध करेंगे तो विजय उन्हीं को प्राप्त होगी; इसलिये ६ वर्ष के लिये उसने सन्धि कर ली।

इस युद्ध में पराजित होने से मुसल्मानों को बड़ी हानि हुई। आस-पास की जातियों ने उन्हें बड़े धोखे दिये। क़बीले उमीर और बनी सलीम ने ७० मुसल्मानों का वध धोखे से कर डाला।

जब से मुसल्मान मदीने में आये तभी से यहूदी उनसे नाराज़ थे। बदर की लड़ाई में मुसल्मानों ने विजय प्राप्त की, इसका यहूदियों को बड़ा शोक हुआ। किसी-किसी ने मुहम्मद साहब के विषय में बुरे-बुरे गीत बनाये और कोई-कोई क़ुरैशों को उत्तेजित करते रहे। मुहम्मद साहब ने इन्हें बहुत समझाया किन्तु इन्होंने बिल्कुल न माना। एक दिन एक मुसल्मान लड़की दूध बेचती बेचती यहूदियों के बाज़ार में जा निकली। वहाँ वह बहुत तङ्ग कीगई। मुसल्मान इसे देख न सके और मार-पीट आरम्भ होगई। यहूदी लोग भाग कर अपने क़िले में घुस गये, परन्तु उनका क़िला भी घेर लिया गया। अन्त में यहूदी भूख-प्यास से पीड़ित होकर मुसल्मानों की शरण आये। यदि अब्दुल्ला बिन उब्बी उनके छुड़ाने का उद्योग न करते तो वे सब मारे गये होते। वे सब मदीने से बाहर निकाल दिये गये।

उहद के युद्ध के बाद मुसल्मानों को अशक्त जानकर बन

नज़ीरके यहूदियों ने मित्रता के भेष में मुसल्मानों को नष्ट करने का ढंग निकाला। एक दिन उन्हें न्योता दिया गया और सब एकत्रित हुए। उसी समय मुहम्मद साहब को यह बात मालूम होगई और वे भाग गये। इस प्रकार सब मुसल्मानों के प्राण बचाये गये।

मुसल्मानों ने इस छलें का बदला लेना चाहा। मुहम्मद साहब एक छोटी सी सेना लेकर वहां पहुंच गये, परन्तु यहूदी सामना न कर सके। यहूदियों के प्रसिद्ध क़िले छीन लिये गये और वे अन्य देशों को भगा दिये गये। उनका सब माल मुसल्मानों के अधिकार में आया, परन्तु इसको उन्होंने सिपाहियों में नहीं बांटा; किन्तु आज्ञा दी कि बिना युद्ध के जो माल आवे वह निर्धनों और अपाहिजों के काम आवे।

मुसल्मानों और यहूदियों के मध्य में शत्रुता बढ़ती गई। मुसल्मानों के लिये दो प्रधान शत्रु कुरैश और यहूदी रह गये। अब यहूदी भी उनके खून के प्यासे होगये। परन्तु इसके साथ-साथ उनके साथियों की भी संख्या बढ़ती गई।

के लिये यह बड़ी ही लज्जा की बात थी कि वह एक साधारण सिपाही के हाथ पड़े। अन्त में उसने कुछ रुपया देकर अपने को स्वतन्त्र करना चाहा, परन्तु उतना रुपया वह वहां पर कहां से लाती। उसके सभी सम्बन्धी इस प्रकार नौकर-चाकर होगये थे। जब उसे अपनी मुक्ति का कोई उपाय न मिला, तब वह मुहम्मद साहब की शरण में आई और कहा कि मैं शाह की बेटी हूँ। दुर्भाग्य से इस दशा को प्राप्त हुई हूँ। मेरे सभी सम्बन्धी दास होगये हैं। यद्यपि मेरा धर्म आप के धर्म से भिन्न है, तो भी मुझे आप से न्याय की आशा है। बिना आपकी सहायता के मैं इस बन्धन से मुक्ति नहीं पा सकती हूँ।

इसकी दशा देखकर और रामकहानी सुनकर मुहम्मद साहब का हृदय दया से उमड़ आया, परन्तु देश के नियम और युद्ध के नियमों का वे उल्लङ्घन न कर सकते थे। मुहम्मद साहब ने उसके मालिक को सब रुपया भेज कर उसे मुक्त करा दिया और एक विश्वासी व्यक्ति के साथ उसे मदीने में उसके माता-पिता के पास भिजवा दिया।

इसी समय उसका बाप मुहम्मद साहब के पास बहुत सा धन लेकर आ पहुँचा। वहां आकर उसे मुहम्मद साहब की अत्यन्त उदारता और अपनी लड़की की मुक्ति का सारा हाल मालूम हुआ। उसकी इतनी अधिक श्रद्धा मुहम्मद साहब पर हुई कि उसने और उसकी पुत्री ने इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया।

हारिस ने मुहम्मद साहब से प्रार्थना की कि वे जोयज़ह को अपनी सेवा के लिये स्थान देवें। मुहम्मद साहब अभी इस सोच-विचार ही में थे कि यह समाचार चारों ओर फैल गया कि मुहम्मद साहबके साथ जोयज़ह का विवाह होगया। मुसल्मानों ने निश्चय किया कि इस समय जितने दास क़ैद हुए हैं सब मुक्त कर दिये जायें। जब जोयज़ह मुहम्मद साहब की स्त्री होगई, तब उसके सम्बन्धियों को दासत्व में रखना दोनों पक्षों के लिये लज्जाजनक है। मुहम्मद साहब ने जब देखा कि यह समाचार बहुत दूर-दूर तक फैल गया है तब उन्होंने विवाह करना स्वीकार कर लिया। इस विवाह से इस्लाम धर्म को बड़ा लाभ पहुँचा। जितने मनुष्य दास बनाकर पकड़े गये थे सब मुक्त कर दिये गये और वे सभी मुसल्मान होगये अर्थात् लगभग सौ मनुष्योंने इस्लाम धर्म स्वीकार किया।

अबूसफियां और मुसल्मानों के बीच में जो एक वर्ष के लिये सन्धि हुई थी उसका समय भी पूरा होता आया। अबू-सफियां तैय्यार था कि जब उसे अवसर मिले वह मुसल्मानों का नाश करे। उसने अरब के सभी क़बीलों को मुसल्मानों के विरुद्ध खड़ा कर रक्खा था। सब सज-धज कर मदीने पर धावा करने को आगे बढ़ रहे थे। जब मुहम्मद साहब को यह समाचार मिला तब वे बहुत घबराये। अभी उहद की लड़ाई में इन्होंने बड़ी हानि उठाई थी और दूसरे संख्या में ये लोग बहुत कम

थे; तीसरे अत्यन्त निर्द्धन थे। ऐसी अवस्था में मुसलमान किसी तरह ऐसी भारी सेना का सामना न कर सकते थे। उनके पास न तो पहिनने को कपड़ा और न खाने को कोई सामान था। यदि उनके पास कोई विश्वसनीय शक्ति थी तो वह केवल धर्म था। उनका भरोसा ईश्वर पर था और इसी शक्ति के सूत्र में वे बँधे थे, परन्तु अरब के मूर्त्ति-पूजक एकता ही के कारण इनसे डरते भी थे। अन्त में यह निश्चय किया गया कि मदीने के आस-पास एक खाई खोदी जावे, परन्तु इस कार्य के लिये न तो उनके पास धन था, न मनुष्य और आवश्यक हथियार ही थे। इन वस्तुओं को बड़ी कठिनाई होने-पर भी यह कार्य आरम्भ किया गया। रात-दिन काम जारी रहा। उन्हें खाने-पीने की याद न रही। खाने को उनके पास कुछ भी न था। एक टोकनी खजूर जो कहीं से प्राप्त हुए थे उन्हीं से उन्होंने अपना निर्वाह किया। लिखा है कि मुहम्मद साहब के प्रताप से एक टोकनी खजूरों से सैकड़ों मनुष्योंने खाया और टोकनी भरी की भरी रक्खी रही। अन्त में खाई खुद कर तैयार होगई। मक्का-निवासी अबूसुफियां आदिका साहस नहीं हुआ कि खाई को पार करके मदीने पर धावा करें। इसपार मुसलमानी सेना थी और उसपार अरब की सम्पूर्ण शक्तियाँ थीं। बड़ा घोर युद्ध होता रहा। मुहम्मद साहब की ओर के बनू कुरैज ने भी धोखा दिया और वह शत्रु सेना में जा मिला। साद बिन मुआज़ भी बहुत घायल

विजय के समय क़ुरैश के योद्धा हार गये और समरभूमि मुसलमानों के अधिकार में आई। भागते-भागते नौफ़िल-बिन अब्दुल्ला का घोड़ा खाई में गिर पड़ा। मुसलमानों ने उसे पत्थरों से मारना आरम्भ कर दिया। उसने कहा कि गिरे हुओं को मारना वीरों का काम नहीं है। यदि कोई वीर है तो वह मेरे साथ मैदान में आवे। हज़रत अली ने मुहम्मद साहब की आज्ञा ली और उस खाई में कूद पड़े। थोड़ी ही देर में वे शत्रु का सिर काट कर बाहर ले आये। वहाँ अबूजहल के बेटे को भी खूब घायल किया परन्तु वह ज्यों-त्यों वहाँ से भाग गया। यह युद्ध जङ्ग-खन्दक़ अर्थात् खाई की लड़ाई के नाम से प्रसिद्ध है।

मुहम्मद साहब ने देखा कि यह युद्ध शीघ्र समाप्त नहीं होगा, इसलिये बिना किसी कपट या छल के शत्रु पर विजय प्राप्त करना सहज काम नहीं है। उन्होंने इस हेतु दो मनुष्यों को शत्रु-सेना में भिजवा दिया कि वे वहाँ जाकर मत-भेद पैदा करें।

दूत भी चतुर थे। अबुसफियाँ को यह पट्टी पढ़ा दी गई कि यह जो नबूक़ुरैज़ा तुम्हारे साथ मित्रता का दावा कर रहा है बड़ा धोखेबाज़ है। यह तुमसे कुछ प्रतिष्ठित मनुष्यों को अमानतके रूप में माँगेगा। तुम्हें फँसाने के लिये उसने मुहम्मद साहब की सेना को त्याग दिया है। तुम इससे बचे रहना। इधर उन्होंने नबूक़ुरैज़ा से कहा कि तुम अबूसफियाँ के साथ

मिल कर क्यों अपने को दुःख में डाल रहे हो। 'क्या तुमको नहीं मालूम है कि इस युद्ध में मुहम्मद साहब की विजय होगी? नबूसफ़ियां और क़ुरेश सब भागने वाले हैं। यदि वे भाग गये तो तुम से बुरा बदला लिया जायगा। इसलिये तुम उनसे बचो। यदि वे मुहम्मद साहब से युद्ध करना ही चाहें तो तुम उनसे प्रतिष्ठित मनुष्य लो, जिनको अपने अधिकार में रक्खो और उनसे यह प्रतिज्ञा करो कि जब तक मुसलमानों का नामो निशान न मिट जायगा तब तक हम न भागेंगे।

यह सब षड़यन्त्र रच कर दोनों दूत अपनी सेना में लौट आये। अबूसफ़ियां ने नबू क़ुरैज़ा से कहा कि कल युद्ध करना है। तुम तय्यार हो जाओ। परन्तु उसने उत्तर दिया कि आज रविवार है, मैं तय्यार नहीं हो सकता हूँ। यदि तुम युद्ध करना ही चाहते हो तो अपने यहां से अच्छे योग्य और प्रतिष्ठित मनुष्य अमानत के रूप में मेरे पास यहां भेज दो। और यह प्रतिज्ञा करो कि जब तक हम में से एक भी व्यक्ति रह जायगा तब तक बराबर युद्ध करेंगे। अबूसफ़ियां का सन्देह बढ़ गया और उसने सोचा कि हो न हो यह तो शत्रु-दल का मनुष्य है। धोखे से हम में मिल गया है। अब अपनी भलाई नहीं है। चलो भाग चलें।

उसने आज्ञा दी कि सब लोग रण-क्षेत्र को छोड़ कर भाग जावें। और वह स्वयम् एक सांडनी पर सवार होकर भाग गया। इसी अवसर में बड़ी आंधी आई जिससे शत्रुओं का

हृदय दहलने लगा। चारों ओर यह समाचार फैल गया कि यह आँधी नहीं है परन्तु मुहम्मद साहब को माया है। इससे शत्रु और भी निराश हो गये।

जब क़ुरैश के भय का अन्त हो गया, तब मुसल्मानों ने नबूक़ुरैज़ा से विश्वासघात करने का कारण पूछा और उसे अपराधी सिद्ध किया। उसके क़िले को घेर लिया। और कुछ दिनों तक वे क़िले में बन्द रहे, परन्तु बाद में वह क़िला मुसल्मानों के अधिकार में उन्हें देना पड़ा। उन्होंने क़बीला बनी औस से इनको क्षमा करने के लिये प्रार्थना की। मुसल्मानों से यह प्रार्थना की गई कि वे स्वयम् कुछ न करें और इसका निर्णय इसी क़बीले के सरदार सअ़द बिन मआ़ज़म की राय पर छोड़ दें।

मुसल्मान इसको मानने को तय्यार न थे। वे बड़ी कठिनाइयों से राज़ी हुए। असद बिन मआ़ज़मने यह आज्ञा सुनाई कि बनोक़ुरैज़ाने मित्रता के व्योहार को और अपने प्रण को तोड़ा है। इसने धोखे और बलवे का अपराध किया है। जिसका केवल दण्ड यह है कि इसके सब हथियारबन्द सिपाही मार डाले जावें और स्त्रियाँ और बच्चे ग़ुलाम बना लिये जावें। इनका माल व धन सब ज़ब्त कर लिया जावे और वह इस्लामी सिपाहियों में बाँट दिया जावे। इस आज्ञा के अनुसार २५० सिपाही उसी समय वध कर डाले गये। इससे सिपाहियों को बड़ा सन्तोष हुआ। यह दण्ड किसी

हद तक कठोर था परन्तु समय को सामने रखकर और शान्ति रखने के हेतु कदाचित् आज-कल को गवर्नमेण्ट भी ऐसा ही दण्ड देती।

मुहम्मद साहब और अन्यान्य धर्म के संचालकों में बड़ा भेद था। वे सब के सब संसार के त्यागी थे, परन्तु इनको अपने धर्म की रक्षा के निमित्त युद्ध भी करना था। उन्होंने पहिले तो एक श्रेष्ठ वंश में जन्म लिया था, दूसरे वे मक्के के राजा के समान थे। इनको अपने धर्म के लिये तलवार उठानी पड़ी और इसी कारण से यह धर्म साधुओं का धर्म न होकर शताब्दियों तक राजाओं और योद्धाओं का धर्म रहा।

मक्के को जा रहे थे। मुहम्मद साहबने भी उनके ही साथ जाकर एकबार अपनी मातृभूमि के देखने की इच्छा प्रगट की। बात ही बात में डेढ़ हजार मुसल्मान् उनके साथ चलने को प्रस्तुत हो गये। सब लोग शस्त्र-हीन गये। कोई भी मनुष्य अपने मनमें युद्ध के लिये विचार न कर रहा था। सभी प्रेमपूर्वक मक्का जाने को तय्यार हो गये। परन्तु कु रैश को सन्देह उत्पन्न हुआ।

मुसल्मानों को रोकने के लिये उसने बड़ी भारी सेना इकट्ठी कर ली। जब मुसल्मान मक्के की हद में पहुंचे, तब वहां से उन्होंने एक दूत कु रैश लोगों के पास भेजा, परन्तु कु रैश लोगों ने उसके साथ बुरा बर्त्ताव किया। उन्होंने कहला भेजा कि हम मुसल्मानों को मक्के की हदमें भी न घुसने देंगे। अपने सिपाहियों को उन्होंने आज्ञा दी कि यदि कोई भी मुसल्मान् काबे की ओर बढ़े तो वह मार डाला जाय। वे लोग इस पर बिगड़ खड़े हुए और उन्होंने मुहम्मद साहब के ऊपर पत्थर फेंके और तीर चलाये। यह हाल देखकर मुसल्मानों को बड़ा क्रोध आया। वे कुछ मनुष्योंको पकड़ कर मुहम्मद साहब के पास ले गये, परन्तु आपने उनको साफ़ छोड़ दिया और कहला भेजा कि हम युद्ध करने के लिये नहीं आये हैं बल्कि मक्के के दर्शन की अभिलाषा से और मातृ भाव से भरे प्रेम की इच्छा से आये हैं। उन्होंने यह भी विश्वास दिलाया कि आप लोग जो शर्तें पेश करेंगे हम सब उनको स्वीकार कर

सकते हैं । बड़ी कठिनाइयों से कुरैश राज़ी हुए और उन्होंने एक सन्धि-पत्र तय्यार किया, जिसमें दोनों ओर की यह शर्तें थीं ।

(१) दस वर्ष तक कोई दल एक दूसरे पर धावा न करे ।

(२) यदि कोई कुरैश अपने सर्दार की आज्ञा के बिना मुहम्मद साहबके पास चला जाय तो वह कुरैशके हवाले किया जाय ।

(३) यदि मुसल्मानों का कोई आदमी कुरैशों के पास चला जाय तो वह मुसलमानों के हवाले न किया जाय ।

(४) अरब की अन्य जातियाँ जिससे चाहें मिलें । इसमें किसी को एतराज़ नहीं है ।

(५) अब मुसल्मान आगे न बढ़ें और लौट जांय । आगामी वर्ष से उन्हें मक्के में ठहरने के लिये ३ दिन दिये जावेंगे । वहाँ उनको निःशस्त्र आना होगा ।

इस सन्धि-पत्र पर दोनों ओरके हस्ताक्षर तो हो गये, परन्तु मुसल्मान निराश होकर मदीने को लौट गये ।

अब मुहमद साहब, अपना "पैग़ामे इलाही"—धर्म-सन्देश चारों ओर भेजने लगे । उन्होंने बादशाहों तक ईश्वरीय आज्ञा भेजी और चारों ओर यह बात फैला दी कि यह धर्म सबके लिए समान है । वे प्रति वर्ष इस समाचार को चारों ओर फैलाते थे । इस वर्ष उन्होंने बड़े-बड़े बादशाहों के पास इस पैग़ाम को भेजा और इस्लाम धर्म स्वीकार करने का उनसे अनुरोध

किया। चार मुसलमान बादशाहों के नाम जिन्हें पैग़ाम भेजा गया था वे हैं :—

(१) खसरा ख़ुसरू परवेज़—ईरान का बादशाह,
(२) हरक्युल—बादशाह कुस्तुनतुनियां रूम,
(३) मिस्तामो—शाह अबीसीनिया,
(४) शाहे बनी गुस्सान,

इन राजाओंके पास जो पैग़ाम या फ़रमान भेजा गया था, वह सीधी-सादी भाषा में था। उसका भाव यह है—यह पत्र मुहम्मद की तरफ़ से है जो ख़ुदा का बन्दा है और जो उसका पैग़म्बर है। बादशाह को मालूम हो कि जिसने इस्लाम धर्म को स्वीकार किया है वह सदैव सुखी रहेगा। मैं तुम्हें उसी धर्म की ओर बुलाता हूँ। यदि तुम इस पर ईमान—विश्वास—लाओगे तो तुम्हारा यह लोक और परलोक दोनों सुधर जायँगे।

जिस समय यह पत्र फ़ारिस के राजा के पास पहुँचा, उस समय उसके यहाँ बड़ी धूम धाम का महोत्सव था। रूमियों पर इसने विजय पाई थी, इसी से यह उत्सव किया जा रहा था। जब ईरान के राजा के पास यह पत्र गया और उसने अपना नाम मुहम्मद साहब के नाम के बाद सुना, तब क्रोध आकर उसने उस चिट्ठीके टुकड़े-टुकड़े कर डाले।

मुहम्मद साहब को जब इस बातका समाचार मिला त उन्होंने कहा कि यदि वह सत्य पर न आवेगा तो ईश्वर

राज्य को इसी प्रकार टुकड़े टुकड़े कर डालेगा। कुछ समय के पश्चात् ऐसा ही हुआ और ईरान का विस्तृत राज्य नष्ट हो गया।

हरकल नामी कुस्तुनतुनियां के राजाने इस फ़रमान का आदर किया। उनके दूत का भी सत्कार किया। यद्यपि वह अपना धर्म बदल नहीं सकता था, तोभी उसने मुहम्मद साहब के पास नज़राने भेजे। निज्जाशी शाह-अबीसीनियांने दीन-इस्लाम स्वीकार किया और एक तेज़ घोड़ा, एक विचित्र खच्चर, जिसका उसने दुलदुल नाम रखा था, और एक वेरह नाम का सेवक इनकी सेवा में भेजा।

शाहवनी गुस्सान ने धर्म-दूतके साथ अच्छा वर्ताव नहीं किया। उसने दूतको क़त्ल कर डाला। मुसल्मानों का हृदय इस से यद्यपि बहुत दुःखित हुआ परन्तु इसी घटना के बाद से रूम-विजय का द्वार खुल गया।

यहूदी सदा से मुसल्मानों के शत्रु चले आते थे। उनमें से बहुतों का वध किया गया और कुछ देश से बाहर निकाल दिये गये। उनका माल ज़ब्त कर लिया गया, परन्तु इतना होने पर भी उन्होंने मुसल्मानों से वैर करना नहीं छोड़ा। उनकी एक बड़ी बस्ती मदीने से ३ या ४ मील की दूरी पर थी जिसका नाम ख़ैबर था। इस प्रान्त में कई क़िले थे। अलक मूसा नाम का क़िला बहुत ही दृढ़ और रक्षित था। ये लोग पहिले ही से मुसल्मानों के शत्रु थे जब इन्होंने

देखा कि उनके भाईबन्द बनी नज़ार और बनी कुरैश को मुसल्मानोंने देश से निकाल दिया है तब उनकी शत्रुता और भी बढ़ गई। उनका अन्तिम प्रयत्न मुसल्मानों पर विजय पाने का था। इस झगड़े में यहूदियों के साथ-साथ अरब के और-और कबीले भी थे। अरब का एक प्रभावशाली कबीला बनी गुतफान भी बड़ी भारी सेना के साथ इनसे मिल गया। मुसल्मानों पर एक बड़ा भारी हमला करने की तैयारियाँ होने लगीं। मुसल्मानों को भी इस षड़यन्त्र का समाचार मिल गया। उन्होंने भी देर करना ठीक न समझा और यहूदियों के आक्रमण के पहिले ही खैबर के किले पर धावा कर दिया। अभी तक कोई सेना इन तक नहीं पहुँची थी और बाहरी ही सहायता मिली थी। वे सामना न कर सके और किलेमें बन्द हो गये। मुसल्मानोंने क्रमशः इनके सब किलों पर विजय प्राप्त की और सबको अपने अधिकार में कर लिया। अलक मूस नामका प्रधान दुर्ग भी इनके अधिकार में आगया। इस किले को जीत लेने के पश्चात् मुहम्मदी तूती चारों ओर गूंज उठी। यहूदियोंकी हिम्मत टूट गई और इन लोगोंने मुसल्मानों से अपने इस छत्य के लिये क्षमा माँगी। मुहम्मद साहब ने इनको क्षमा किया और स्वतन्त्रता-पूर्वक उनको अपने धर्म के पालन करने की आज्ञा दी।

इस विजय के पश्चात् मुहम्मद साहब खैबर में

एक यहूदी स्त्री ने इनको निमन्त्रण दिया और इन्होंने उसको स्वीकार कर लिया, परन्तु उस स्त्री ने इनके भोजन में विष मिला दिया था। इनके साथियों में से एक तो खाते ही मर गया। मुहम्मद साहबने केवल एक ही ग्रास खाया था। उनको भोजन बुरा मालूम हुआ, परन्तु इतने थोड़े भोजन ने ही मुहम्मद साहब को कष्ट दिया। उनका स्वास्थ्य ख़राब हो गया और उनके अन्तिम जीवन तक उसका बुरा असर रहा। यहाँतक कि मरते समय भी उन्होंने उस विष की शिकायत की थी, परन्तु स्त्री जान कर उस विष देनेवाली को उन्होंने कुछ नहीं कहा और उसे अपने क़बीले में सुख-चैन से रहने की आज्ञा दे दी।

जब मुहम्मद साहब ख़ैबर से मदीने में पहुँचे तब उनको यह समाचार मिला कि उम्म हबीबह बिनत अबूसफ़ियां का पति अबीसीनियां में मर गया। वह मदीने ही में आई हुई थी। उसने भी चाहा कि हज़रत मुहम्मद साहब उससे विवाह करके अपनी सेवा में रहने की आज्ञा देवें। मुहम्मद साहब ने इस सम्बन्ध से बहुत बड़ा एक लाभ देखा। उन्होंने सोचा कि इस विवाह से मुझ में और अबूसफियां में, जिससे आज तक घोर शत्रुता रही है, एक सम्बन्ध हो जावेगा और पुरानी शत्रुता जाती रहेगी। उम्म हबीब अधेड़ स्त्री थी। उसके पहले पति से एक लड़की भी थी जिसका नाम हबीबा था मुहम्मद साहब ने उससे निवाह कर लिया।

"सातवें वर्ष के अन्त में मुसल्मान उस सन्धि-पत्र के अनुसार (जिसको कि उन्होंने कुरैशों के साथ किया था) मक्के को गये। अपने देश का दर्शन किया और वहां तीन दिन रहे। इब्राहीम की विधि से उन्होंने इबादत की। मुहम्मद साहब कुरैश को धन्यवाद देनेकी फ़िक्र में थे। वहां से समाचार आया कि मुसल्मानों को तीन दिन मक्के में होगये वे अब नगर के बाहर चले जावें।" मुहम्मद साहब इस समाचार को पाते ही तत्क्षण नगर के बाहर हो गये और कुछ मील दूरी पर उन्होंने अपना डेरा डाल दिया। मुहम्मद साहब और उनके साथियों के बर्ताव ने कुरैश लोगों पर अच्छा प्रभाव डाला। बहुत से उसी क्षण मुसल्मान हो गये। वीर खालिद इब्न वलीद जो इनका एक प्रधान शत्रु था और जो उहद की लड़ाई में इनके प्राणों के पीछे पड़ा था मुहम्मद साहब की उदारता और उनके पवित्र जीवन से मोहित होकर मुसल्मान बन गया। एक प्रसिद्ध कवि भी जो मुहम्मद साहब के विरुद्ध कविता लिखा करते थे मुसल्मान हो गये। इन कविजी का नाम उस्त्रबिन अलआस था।

इस समय मुहम्मद साहब ने कुरैश की एक बुढ़िया स्त्री से जिसका नाम मैमूना था विवाह किया। यह विवाह खालिद बिन वलीद के साथ गहरा सम्बन्ध पैदा करने के लिये किया गया था। मैमूना की अवस्था उस समय पचास वर्ष से भी कुछ अधिक थी। मुहम्मद साहब अपने उद्देश्य में भी

हुए। खालिद बिन वलीद सरीखे कट्टर शत्रु भी आपके मित्र बन गये।

शाह बनी गुस्सान ईसाई था और उसका क़बीला भी ईसाई धर्म का अनुयायी था। उसने मुहम्मद साहब के धर्म-दूत को क़त्ल कर डाला था इसलिये मुसल्मानों ने उससे बदला लेने के लिये तीन हज़ार आदमियों की एक सेना रवाने की। उसने भी शाह क़ुस्तुनतुनियां की सहायता से एक बड़ी सेना भेजी। मौतानगर के पास दोनों सेनाओं ने अपने-अपने डेरे लगाये। युद्ध आरम्भ हुआ। दोनों पक्षोंके पुरुष वीर थे और शस्त्रों से सुसज्जित थे। दोनों ही की बड़ी हानि हुई। यद्यपि मुसल्मानों की विजय हुई, परन्तु इनकी हानि भी बहुत हुई और इस विजय से वे लोग कुछ लाभ न उठा सके और लाचार मदीने को चले आये।

मक्के के सन्धि-पत्र में एक शर्त्त यह भी थी कि क़ुरैश लोग मुसल्मानों के मित्रों को न सतावें और न मुसल्मानों के मित्र क़ुरैशों से लड़ें; परन्तु मक्के के क़ुरैश ने उस शर्त का उलङ्घन किया और छेड़-छाड़ आरम्भ कर दी। क़बीला बनी गज्जा मुहम्मद साहब का मित्र था और क़बीला बनी बकर क़ुरैश का सहायक था। इन दोनों क़बीलों में किसी कारण लड़ाई आरम्भ हो गई। बनी गज्जाने मुसल्मानों से सहायता माँगी, परन्तु सन्धिपत्र के नियम के कारण वे यकायक सहायता नहीं दे सके। परन्तु क़ुरैशों ने बनी बकर को सहायता भेज दी।

उन्होंने पूरी तय्यारी युद्ध की करली। कुरैश के योद्धा भेष बदल कर इस युद्ध में शामिल हो गये।

इस संग्राम ने भयङ्कर रूप धारण किया। कुरैश मक्के बनी खज़ा से लड़ते-लड़ते हरम के भीतर जा घुसे। बनी खज़ा ने बहुत कुछ कहा और चिल्लाया कि लड़ाई से बचो। हरम मुहतरम को पवित्र रहने दो, परन्तु मक्के के कुरैश ने एक भी न सुनी और बीस मुसलमानों के प्राण नाश किये।

उमर बिन सल्लाई मुहम्मद साहब की शरण में आया और उसने मक्के पर किये हुए अत्याचारों की घटना का सम्पूर्ण हाल कह सुनाया। इस कार्य में कुरैशों ने अपने प्राचीन नियमों का उल्लङ्घन किया। हरम मुहतरम की सीमा के भीतर ख़ून करना घोर पाप समझा जाता था। इब्राहीम के समय में यदि कोई व्यक्ति खून करके हरम की सीमा में आ जाता तो उसे कोई गिरफ़्तार नहीं कर सकता था।

मुहम्मद साहब को कुरैशकी ओर से बहुत घृणा उत्पन्न हुई। जो मनुष्य सन्धि-पत्र के नियमों का भी उल्लङ्घन कर सकता है उस से किसी प्रकार के विश्वास की आशा रखना व्यर्थ है। मुहम्मद साहब ने बनी खज़ा से कहा कि यदि अब मैं तुम्हारी सहायता न करूँ तो ईश्वर मेरी सहायता न करे। इनके यह कहते ही मक्के पर आक्रमण करने की तैयारी होने लगी। रमज़ान के दिन इस बात की घोषणा कर दी गई। शीघ्र १०००० मनुष्य एकत्रित हो गये। सेना तय्यार

इसी सेना के साथ मुहम्मद साहब भी मक्के की ओर बढ़े। यह सेना मक्के में पहुँच गई। मक्के के क़ुरैश को भी इस बात का समाचार मिल गया था। उन्होंने भी सामना करने की तैयारियाँ करली थीं, परन्तु अरब में इस्लामी सेना की शक्ति का ढिंढोरा पिट चुका था। कोई भी उनसे लड़ने की हिम्मत न करता था। सेना के आनेका समाचार सुनते ही उन लोगों के हाथ-पांव फूल गये। इधर अबूसफियाँ मुसल्मानों की सेना की खोज कर रहा था। वह एक दिन सन्ध्या के समय वहीं आ पहुँचा जहाँ पर मुसल्मानों की सेना ठहरी थी। जङ्गल में कोसों तक आग जलती हुई देख कर वह चकित हो गया। वह जिधर दृष्टिपात करता था उसे उधर इस्लामी सेना ही फैली हुई दृष्टिगोचर होती थी।

मुहम्मद साहब के चाचा ज़ोरसे बोलने के लिये प्रसिद्ध थे। वे जो बात धीरे से भी कहते तो वह दूसरों के लिये चिल्लाने के बराबर होती थी। उन्होंने किसी से कहा था कि यदि क़ुरैश ने ज़रा भी गड़बड़ की तो उसका नाम मक्के से मिटा दिया जायगा। यह बात अबूसफियाँ के कानों में पड़ गई। वह डरता-डरता हज़रत अब्बास की सेवा में उपस्थित हुआ और कहा कि आप हमारे पूज्य हैं इस लिये जो बात हमारे हित की हो उसे ही बतलाइये। हज़रत अब्बास ने कहा कि तुम्हारे लिये यही हितकर है कि तुम अभी मुहम्मद साहब की सेवा में चले जाओ और ख़ुदा के ऊपर ईमान—

विश्वास—लाओ। ये बातें हो ही रही थीं कि कहीं से हज़रत उमर ने दूरसे अबूसुफ़ियाँ को देख लिया। वह नंगी तलवार ले कर झपटे और कहा कि इस काफ़िर को यहां पर कौन लाया है? अब्बास ने बड़ी कठिनता से उनको रोका। वे शीघ्र ही मुहम्मद साहब के पास गये और उनकी आज्ञा ले आये कि अबूसुफ़ियाँ को कोई भी क़त्ल न करे। थोड़ी देर में अबूसुफ़ियाँ भी मुहम्मद साहब की सेवा में आ उपस्थित हुआ।

मुहम्मद साहब उससे भली प्रकार से मिले। उसका हाथ अपने हाथ में लिया और उसे समझाया कि ऐ अबूसुफ़ियाँ! सिवा परमात्मा के कोई पदार्थ पूजनीय नहीं है। वन्दना केवल उसी ईश्वर की हो सकती है। जिन वस्तुओं की तुम पूजा करते हो वे तुमको किसी प्रकार भी हानि या लाभ नहीं पहुँचा सकती हैं। अबूसुफ़ियाँ ने कहा कि ऐ रसूल! आप की उदारता और दया की प्रशंसा मैं नहीं कर सकता हूँ। मैंने जो कुछ आपके साथ किया है वह सब मुझे याद है और उसके बदले में जो कुछ दया आप दिखा रहे हैं वह भी स्मरण है। मेरा हृदय इस बात की गवाही देता है कि वास्तव में ये वस्तुयें जिनको हमलोग पूजा करते हैं पूजा के योग्य नहीं हैं। यदि ये हमारी सहायता करतीं तो हम बार-बार क्यों हारते? मैं सबके सम्मुख बुत-परस्ती को छोड़ कर ख़ुदा पर ईमान—विश्वास—लाता हूँ।

इस्लामी सेना में थोड़े ही समय में यह समाचार फैल गया कि अबूसफ़ियां मुसल्मान हो गया। मुसल्मानों ने बड़े आनन्द मनाये। चारों ओर जहाँ पहिले अबूसफ़ियाँ की बुराई होती थी अब उसकी प्रतिष्ठा होने लगी।

दूसरे दिन प्रातःकाल इस्लामी सेना सज-धज कर मक्के की ओर बढ़ी। कुछ लोग पहाड़ों पर खड़े हुए सेना को देख रहे थे। मक्का-निवासियों ने उन्हें देखने के लिये शायद किसी को भेजा था। सब से अव्वल क़बीला बनूसलीस की पैदल सेना ने प्रस्थान किया। ये लोग अपनी वीरता के कारण बहुत प्रसिद्ध थे। सारी फौज के सिपाही नंगी तलवारें लिये आगे बढ़ रहे थे। इसी के हाथ में सेना की पताका थी। इसके बाद ज़बीर बिन अवाय के सिपाही थे। उनके हाथ में युद्धका काल-चिह्न था। उनके शस्त्र प्रातःकाल के रवि की किरणों के पड़ने से खूब चमक रहे थे। जिस से उन पर दृष्टिपात करने से चकाचौंध आजाती थी। इसके बाद बनूक़ाब बिन आमिर और उनके बाद क़बीला मजीना की सेना दो पताकाओं को लिये बड़े घमण्ड के साथ चली जाती थी। इसके बाद हज़रत मुहम्मद साहब कसुआ नामक ऊँटनी पर सवार थे। इस दिन सिर पर इन्होंने काली पगड़ी बाँध ली थी और बड़े ज़ोर से मधुर स्वर में अन्नाफ़तहना पढ़ते जाते थे। आपके आगे-पीछे पाँच-पाँच हज़ार सेना थी। ये सब ईश्वरीय प्रेम में मस्त थे और मुहम्मद साहब पर प्राण तथा न्यौछावर करने को

तयार थे। इस एक शक्ति को देख कर लोगों का हृदय काँप उठा।

जब इस्लामी सेना मक्के के निकट पहुँची तो अबूसफ़ियाँ ने प्रार्थना की कि यदि आज्ञा हो तो मैं दौड़ कर मक्के में जाऊँ और क़ुरैश को समझाऊँ। इन्होंने आज्ञा दे दी। वह दौड़ता हुआ मक्केमें गया और कहा कि ऐ मेरे मित्रो और बन्धुओ! मैं तो मुसल्मान हो गया हूँ। हमारे झूठे दीन ने हम लोगों को जो कुछ हानि पहुँचाई है वह तुम सबको भली प्रकारसे मालूम है। इस समय यदि अपनी-अपनी जान बचाना चाहते हो तो मूर्त्ति-पूजा छोड़ दो और एक ईश्वर का पूजन करो। इस्लामी सेना को अब कोई भी शक्ति नहीं रोक सकती। उसको रोकनेका प्रयत्न करना अपने आप को मृत्यु के मुख में झोंकना है। तुम मक्के में व्यर्थ ही ख़ून की नदियाँ न बहवाओ। मेरे जीवन की प्रायः सब घटनायें तुमको मालूम हैं। मैं वीर हूँ कुछ डरनेवाला नहीं। कोई ख़ास बात थी जिसने मुझे मुसल्मान बना दिया और वह तुम सबको भी बना सकती है।

ये बातें हो ही रही थीं कि इतने में अबूसफ़ियाँ की स्त्री यह सुन कर कि उसका पति मुसल्मान हो गया है दौड़ती हुई आई और अबूसफ़ियाँ की दाढ़ी पकड़ कर उसे इतना पीटा कि उसका बुरा हाल कर दिया और लोगों को बहुत ही लज्जित किया और कहा कि तुम्हारी सब बहादुरी कहाँ

गई। इस बुड्ढे मूर्ख को ख़ूब मारो। यह हमलोगों को कैसी मूर्खता का उपदेश दे रहा है। इसी बीच में इस्लामी सेना से उड़ी हुई धूल गगनमण्डल में फैल गई। तलवारों की झनकार और घोड़ोंके टापों की ध्वनि आने लगी और कुछ काल में सम्पूर्ण सेना नगर के भीतर घुस आई। उमरबिन अबू ज़हल ये लोग दग़ा और शरारत करने से नहीं चूके। वे और उनके मित्र किसी घात में बैठे हुए थे। उन्होंने ख़ालिद की सेना पर धावा किया जिसमें दो मुसल्मान सिपाही मारे गये। ख़ालिद ने उन्हें खूब समझाया कि तुम क्यों मूर्खता करते हो और प्राणों का नाश करते हो। हज़रत की आज्ञा की देरी है, नहीं तो हम तुम सबको पीस डालेंगे। इस थोड़ी सी मुड़भेड़ में क़ुरैश के २८ आदमी मारे गये। उन्होंने देख लिया कि इस्लामी सेना अब हमारे वश की नहीं है।

मुहम्मद साहब ने ऊँट पर सवार हो कर काबे की परिक्रमा की। इसके बाद अन्दर घुस कर ३६० मूर्त्तियाँ तोड़ डालीं और उस प्राचीन मन्दिर को पवित्र किया। इनके हाथ में एक छड़ी थी। जिस मूर्त्ति के सम्मुख जाते थे क़ुरान मजीद की एक आयत पढ़ते थे। उसका यह अर्थ है कि "हक़" (सत्य) आया और झूठ गया। यह कह कर बुत—मूर्त्ति—के सिर पर छड़ी मारते थे। वह औंधे मुंह नीचे गिर पड़ती थी। सब से बड़ी मूर्त्ति देव हुबल की थी और जिस पर अरब-निवासियों की बड़ी श्रद्धा थी। वे प्रत्येक समय में

अर्थात् कष्ट और दुःखादि में उसके आगे सिर झुकाते थे। यह देव इतने ऊँचे स्थान में बैठाया गया था कि हज़रत की ऊँची वहां तक नहीं पहुँच सकती थी। इस मूर्त्ति को हज़रत अलीने ऊपर चढ़ कर तोड़ा।

इसके बाद मुहम्मद साहब की आज्ञा से काबे की दीवारों पर से देवताओं की मूर्त्तियां मिटाई गईं और उनको खूब धुला कर इस मसजिदे इलाही को भी बुत-परस्ती से पाक किया गया। अब आप नगर की ओर आये। समय बहुत बुरा था। सभी लोग मारे डर के सहम रहे थे। प्रत्येक मनुष्य का विश्वास था कि अब नगर की रक्षा नहीं हो सकती है। मुहम्मद साहब अवश्य ही सब को नाश करने की आज्ञा देवेंगे। जो जो कष्ट उनको दिये गये हैं उन सबका बदला आज वे लेवेंगे। लोग इस विचार से कांपते जाते थे और जानते थे कि मृत्यु सिर पर खड़ी है। लोग नगर को त्याग कर भागने लगे थे। इसी समय मुहम्मद साहब ने यह घोषणा करा दी कि कोई मुसल्मान तलवार न उठावे और मक्केका कोई भी आदमी भाग कर न जावे। आज लड़ाई और बदले का दिन नहीं है। आज प्रेम और दया का दिन है। मैं तुम लोगोंका शत्रु बन कर यहां नहीं आया हूँ और न मैं किसी प्रकार का बदला लेने की इच्छा ही रखता हूँ। मैं तुमसे वही बर्ताव करूँगा जो यूसुफ़ ने अपने भाइयों से मिस्र में किया था। मैं तुम लोगों को झिड़की

मुहम्मद साहब की उदारता।

मक्का विजय करने के बाद बहुत से मनुष्यों के अपराधों पर विचार करना था। मुसल्मान सेनाके लिये, जिसने आपका साथ दिया है, न्याय की आवश्यकता है। अकरमहने एकाएक आक्रमण करके दो निःशस्त्र मुसल्मानों को मार डाला था। उनके घरों में रोना-पीटना मच रहा था। न्याय की यही आज्ञा थी कि उसका भी सिर काट लिया जाय और यही आज्ञा दे दी गई। मृत्यु की आज्ञा को सुनते ही वह मक्के से भाग निकला और उघाड़े शरीर मरुस्थल की धूल छानता फिरा। उसकी स्त्री और बच्चे अनाथ हो गये। ऐसी दशा में अकरमह की स्त्री मुहम्मद साहब की सेवा में उपस्थित हुई। उसने अपनी दुर्दशा रो-रो कर कही। अकरमह के प्राणों की भिक्षा मांगी। मुहम्मद साहब ने उन मुसल्मानों के सम्बन्धियों को जो मारे गये थे राज़ी किया कि वे अकरमह को क्षमा करें। फिर अकरमह की स्त्री को सूचित किया कि तेरा पति क्षमा किया गया। यह समाचार सुनते ही उसके आनन्द की सीमा न रही। वह अपने पति को खोजने के

उसकी मृत्यु हो गई थी। सब का विश्वास था कि इस ख़ूनी मनुष्य को अवश्य ही प्राणदण्ड की आज्ञा दी जायगी, परन्तु मुहम्मद साहब ने उसे क्षमा किया और उसे मुसलमान बनाया। वहशी भी आपकी सेवा में उपस्थित किया गया। यह वही मनुष्य था जिस ने आपके चाचा हमज़ह का गला काटा था। हज़रत सफ़ियाँ को जो मुहम्मद साहब की बुआ—फूफी—थीं अपने भाई के नाश हो जाने का बड़ा दुःख था। इस लिये सब को विश्वास था कि वहशी कस्सास अवश्यमेव प्राणदण्ड पावेगा। हज़रत भी इस से बहुत नाराज़ थे। उसने आते ही सब से यह बात कही कि मैं मुसल्मान हो कर आया हूँ। यह सुनते ही मुहम्मद साहब ने प्राणदण्ड देने की अपेक्षा उसे क्षमा प्रदान की।

स्त्री हिन्दह भी आपकी सम्मुख उपस्थित की गई। यह अबूसफ़ियाँ की विधवा थी। इसने अपने पति की दाढ़ी को पकड़ कर उसे जूतों से पीटा था। उसके मुसल्मान होने पर वह बे-तरह बिगड़ी थी। जब वहशी ने हमज़ह का गला काटा था तब इस स्त्री ने ऐसी निर्दयता का काम किया था जिसे कोई भी प्राणी नहीं करेगा। इसने हमज़ह का पेट चीर-चीर कर कलेजा निकाला और उसे अपने दाँतों से चबाया और मृतक शरीर के नाक और कान काट लिये। मक्का-निवासियों का यह विश्वास था कि यह स्त्री किसी तरह क्षमा प्राप्त नहीं कर सकती है। वह स्वयं अपने कार्यों से लज्जित थी।

उसने लज्जित हो कर अपना मुँह नकाब में छिपा लिया। बहुत सी स्त्रियां मिल कर आई और छिप कर नीचे खड़ी हो गईं। मुहम्मद साहब को मालूम हो गया कि यह हिन्दा है। आपने उसे भी क्षमा किया। मुहम्मद साहब ने कहा कि अच्छा हुआ जो तू मुसलमान हो गई। उसे इस्लाम धर्म की शिक्षा दी। उस से कहा, कि केवल एक ईश्वर के सिवाय किसी की पूजा मत करो, भूठ न बोलो, प्रत्येक प्रकार की बुराइयों और बुरे कामों से बचो। यह दृश्य देखने योग्य था। चारों ओर से मक्का-निवासी आते और अपनी मूर्खता को स्वीकार करके मुसलमान बनते जाते थे तथा अपने किये हुए कर्मों का प्रायश्चित्त करते थे। थोड़े ही समय में मक्के के क़ुरैश ने मूर्त्ति-पूजा छोड़ दी और वे मुसलमान बन गये। जो लोग कई शताब्दियों से ईश्वर को भूले हुए थे उन्होंने बड़े प्रेम के साथ ईश्वर के सम्मुख अपना सिर भुका कर अभिवादन किया।

> कभी के जो फिरते थे मालिक से भागे।
> दिये सिर झुका अपने मालिक के आगे॥

मदीने-निवासियों ने मुहम्मद साहब से यह प्रतिज्ञा कराली थी कि मक्का पर विजय प्राप्त करने पर हमलोगों को आप कहीं न भूल जायें। कभी-कभी हमारे देशमें भी आकर रहें। इसी प्रतिज्ञा के कारण मुहम्मद साहब ने अपनी जन्मभूमि के दर्शनों के उपरान्त मदीने की राह ली।

इसी बीच में क़बीले बनी हवाज़न बन सक़ीफ़के उद्दण्ड मनुष्यों ने एक बड़ी मनुष्य-संख्या तय्यार करके मक्के पर चढ़ाई करने की ठानी। मुसल्मान भी इस नये शत्रुका सामना करने को निकले। इन मुसल्मानों में सब से पहले शत्रुका सामना करने वाले कुरैश मक्का थे। सचाई की शक्ति भी अपार है। जो लोग कल मुहम्मद साहब के खून के प्यासे थे आज वे उनके लिये सिर कटाने और खून बहाने को निकले हैं। मक्के से १० मील की दूरी पर शत्रु-सेना की क्षति हुई। बनी सक़ीफ़ अपने नगर तायफ़ को भाग गया और क़िले में बन्द हो गया। इधर बनी हवाज़न का मुसलमानों ने पीछा किया और उनका क़िला जीत लिया। इसके बाद उनके बाल-बच्चे सब मुसल्मानों के गुलाम बना लिये गये।

बनी हवाज़न को जीतने के पश्चात मुसल्मानों ने तायफ़ पर आक्रमण किया। यह नगर एक पहाड़ पर बसा है और अच्छा रमणीक स्थान है। यह मक्के से बीस मील की दूरी पर है। यह वही नगर है जहाँ ९ वर्ष पहिले मुहम्मद साहब उपदेश देने गये थे। यहाँ के लोगों ने ईंटों और पत्थरों से मार कर इन्हें भगा दिया था। यहीं से ही हज़रत रक्त पोंछते हुए लौटे थे। अब इस्लामी सेना ने इस नगर पर चढ़ाई की। कुछ दिनों के पश्चात् तायफ़ निवासियों ने अपनी हार स्वीकार कर ली और मुसल्मानों के अधिकार में हो गये। उन्होंने मुहम्मद साहब से प्रार्थना की कि हमारी मूर्त्तियाँ दो

यें तक न तोड़ीं जावें, किन्तु उन्होंने इस बात को अस्वीकार किया। नगर-निवासियों ने अन्त में एक ही वर्ष का समय मांगा, पर वह भी अस्वीकार किया गया। यहाँ तक कि एक मास तक का भी समय नहीं दिया गया। ईश्वर के दरबारमें एक मिनट के लिये भी मूर्त्ति-पूजा को स्थान नहीं है। तायफ़-निवासियों को इतनी स्वतन्त्रता होगई कि चाहे वे मुसल्मान हों या न हों यह उनकी इच्छा पर अवलम्बित है। इस बात में उनपर किसी प्रकार की ज़बरदस्ती नहीं की गई, परन्तु उनसे कहा गया कि यदि तुम लोग चाहो कि तुम्हारी मूर्त्तियाँ छोड़ दी जायँ तो यह असम्भव बात है। उनकी सब मूर्त्तियाँ तोड डाली गईं। उनके यहाँ सब से बड़ी मूर्त्ति लाट नाम की थी। उसकी सब से अधिक पूजा होती थी। जब वह मूर्त्ति तोड़ी जाने लगी तब नगर के सब स्त्री पुरुष रोने और चिल्लाने लगे। इसी विजय के पश्चात् मुहम्मद साहब मदीने को चले गये।

बनी हवाज़न कुछ सभ्य पुरुषों को लेकर मुहम्मद साहब की सेवा में उपस्थित हुआ और बड़ी नम्रता के साथ उसने अपने भाई बन्धुओं को छोड़ देने की प्रार्थना की। परन्तु नियमित रीति से गु़लाम सब बाँट दिये गये थे। उनको वापिस ले लेने का कोई नियम न था। यद्यपि यह सब मूर्त्ति-पूजक थे तथापि मुहम्मद साहब को इन पर दया आई। आपने कहा कि जब हम सब लोग मसजिद में नमाज़ के लिये इकट्ठे हों तो तुम यहाँ आकर सब के सामने यह प्रार्थना हमसे करना

कि आप हमारी तरफ़ से मुसल्मानों से प्रार्थना करें और मुसलमानों से कहें कि वे हमारे साथियों को मुक्त कर दें।

आगामी दिवस में जब ज़ुहर की नमाज़ के बाद तीसरे पहर के समय सब मुसल्मान मसजिद नबवी में जमा थे तो उस समय उन्होंने आकर उपरोक्त प्रार्थना की। उनकी प्रार्थना सुनकर मुहम्मद साहब ने कहा कि मैं तो अपने और अपने क़बीले का भाग छोड़ता हूं और जितने आदमी मेरे पास गिरफ़्तार होकर और गुलाम बनकर आये हैं उन सब को मैं स्वतन्त्र कर सकता हूँ। यह कह कर उन्होंने अपने हिस्से के ग़ुलामों को स्वतन्त्र कर दिया।

उस उदार भाव को देखते ही सब के हृदय में यही भाव उठने लगे और सब कहने लगे कि हम भी अपने-अपने ग़ुलामों को स्वतन्त्र क्यों न कर दें? एक क्षण में ६ हज़ार आदमी जो कि मुसल्मान नहीं थे, स्वतन्त्र कर दिये गये। किसी ने भी यह न सोचा कि हम इन विधर्म्मियों को क्यों छोड़ रहे हैं। यह प्रेम, दया और उदारता का एक बड़ा प्रभावशाली उदाहरण था, जिसने यह बतला दिया कि इस्लामी धर्म दान, दया और कृपा के लिये मुसल्मानों और विधर्म्मियों में कोई भेद नहीं समझता है।

इस उदाहरण से बनी सक़ीफ़ और हवाज़न भी मुसल्मान हो गये। इसके पश्चात् मुहम्मद साहब मदीने चले गये और वहां ही उन्होंने अपने जीवन का शेष समय व्यतीत किया।

सातवाँ परिच्छेद।

—अन्तकाल—

मक्का-विजय के पश्चात् शीघ्र अरब में इस्लामी धर्म की धूम मच गई। मूर्त्ति पूजा ऐसी वस्तु न थी, जिसके दोष समझने के लिये इतना समय लगता। चारों ओर से मुहम्मद साहब की शरण में आने वालों की संख्या बढ़ती गई। इस वर्ष इतनी जातियों ने इस्लाम धर्म स्वीकार किया कि मुसल्मानी इतिहास में यह साल आमे वफ़ूद के नाम से प्रसिद्ध है। लोगों का कट्टरपन प्रायः दूर हो चुका था। अपने पूर्वजों की हानिकारक रीतियों के लिये ये लोग काफ़ी दण्ड भोग चुके थे। अब अपने-अपने अपराधों और भूलों की क्षमा मांगते हुए इस्लामी पताका के नीचे आने लगे। मुहम्मद साहब प्रत्येक क़बीले की बड़ी प्रतिष्ठा करते थे। जब ये लोग इस्लाम धर्म को स्वीकार करके अपने-अपने घरों को लौटने लगते तब हज़रत उनके साथ एक उपदेशक भेज देते थे। वह वहां जाकर उन्हें धर्म का उपदेश देता था। सब से अन्तिम युद्ध जिसमें मुहम्मद

होना पड़ा था तबूक़ का युद्ध था। तबूक़ अरब की सीमा के निकट शाम का एक नगर था, जो क़ुस्तुनतुनिया के राजा के आधीन था। इन दिनों अरब में बड़ा अकाल पड़ा था जिससे चारों ओर हाहाकार छागया था। ऐसे अवसर में रूम के राजा ने उस नगर को अपने अधिकार में करने का प्रयत्न किया। उसने अरब पर चढ़ाई करने की तैयारियाँ कीं। मुहम्मद साहब ने ऐसे भयानक शत्रु का अरब में प्रवेश होने देना बहुत हानिकारक समझा। उसे दूर ही रोकना उचित समझा। यद्यपि अरब-निवासियों पर दुर्भिक्ष का अत्याचार नित्यप्रति बढ़ता जाता था; परन्तु उन्होंने ३० हज़ार की सेना इकट्ठी करली और तबूक़ तक जा पहुँचे। अरब की ऐसी कटिबद्धता अथवा कार्य-कुशलता को देखकर रूमियों ने अरब पर चढ़ाई करने का विचार बदल दिया। इस्लामी सेना वहाँ २० दिन तक ठहर कर मदीने लौट गई।

क़बीला 'तय' ने अबतक इस्लामी धर्म को स्वीकार नहीं किया था। अब इसमें के कुछ मनुष्यों ने सिर उठाया और देश में अशान्ति फैलाना आरम्भ कर दिया। मुहम्मद साहब ने हज़रत अली को एक सेना के साथ उनको परास्त करने और शिक्षा देने के लिए भेज दिया। अदी बिन हातिमताई जोकि तय क़बीले का सरदार था सम्मुख आने का साहस न कर सका। हज़रत अली उसके देश पर अधिकार करके वहाँ के निवासियों को बन्दी कर मदीने को ले गये। इन क़ैदियों में

हातिमताई की पुत्री भी थी। जब हज़रत मुहम्मद को यह ज्ञात हुआ तब उन्होंने उसे उसी क्षण मुक्त कर दिया और शेष मनुष्यों को उचित दण्ड दिया। इस देशभक्त और जातिभक्त लड़की ने कहा कि यदि मेरे क़बीले के और मनुष्य दास बनाकर रक्खे जावेंगे तो मैं ही स्वतन्त्र रह कर क्या करूँगी? यदि इन्हें क़त्ल करना है तो पहले मेरा गला शरीर से पृथक् किया जाय। यदि ये लोग ग़ुलामी में रहें तो मैं भी पहिले ग़ुलाम बनाई जाऊँ। मैं यह नहीं चाहती हूँ कि ये लोग क़त्ल हों और मैं जीवित रहूँ या ये ग़ुलाम रहें और मैं स्वतन्त्र बनूँ। मुहम्मद साहब ने उस लड़की के कहने पर सम्पूर्ण क़बीले को प्राण-दान दिया। इस उदारता के वश में होकर उन सब ने इस्लाम धर्म को स्वीकार कर लिया।

अब हज का समय निकट आ गया था। मुहम्मद साहब ने अपने मित्र हज़रत अबूबकर सिद्दीक़ को हाजियों के क़ाफ़िले के साथ हज की रीतियों को पूरा करने के लिये मक्के भेजा और कुछ आवश्यकीय कार्य्य के कारण वे मदीने ही में रहे। हज़रत अली उनके साथ भेजे गये। उनसे कह दिया कि मक्के पहुँचते ही तुम इस बात की घोषणा कर देना कि आगामी वर्ष से मक्का ईश्वर के पूजकों का मुख्य नगर रहेगा। किसी मूर्त्ति-पूजक को वहाँ आने की आज्ञा न होगी। जब हज समाप्त हो चुकी तब अली ने क़ुरबानी के दिन खड़े होकर यह घोषणा की कि आगामी वर्ष से किसी भी मूर्त्ति-पूजक को यहाँ आने

होना पड़ा था तबूक़ का युद्ध था। तबूक़ अरब की सीमा के निकट शाम का एक नगर था, जो कुस्तुनतुनिया के राजा के आधीन था। इन दिनों अरब में बड़ा अकाल पड़ा था जिससे चारों ओर हाहाकार छागया था। ऐसे अवसर में रूम के राजा ने उस नगर को अपने अधिकार में करने का प्रयत्न किया। उसने अरब पर चढ़ाई करने की तैयारियां कीं। मुहम्मद साहब ने ऐसे भयानक शत्रु का अरब में प्रवेश होने देना बहुत हानिकारक समझा। उसे दूर ही रोकना उचित समझा। यद्यपि अरब-निवासियों पर दुर्भिक्ष का अत्याचार नित्यप्रति बढ़ता जाता था; परन्तु उन्होंने ३० हज़ार की सेना इकट्ठी करली और तबूक़ तक जा पहुँचे। अरब की ऐसी कटिबद्धता अथवा कार्य-कुशलता को देखकर रूमियों ने अरब पर चढ़ाई करने का विचार बदल दिया। इस्लामी सेना वहाँ २० दिन तक ठहर कर मदीने लौट गई।

क़बीला 'तय' ने अबतक इस्लामी धर्म को स्वीकार नहीं किया था। अब इसमें के कुछ मनुष्यों ने सिर उठाया और देश में अशान्ति फैलाना आरम्भ कर दिया। मुहम्मद साहब ने हज़रत अली को एक सेना के साथ उनको परास्त करने और शिक्षा देने के लिए भेज दिया। अदी बिन हातिमताई जोकि तय क़बीले का सरदार था सम्मुख आने का साहस न कर सका। हज़रत अली उसके देश पर अधिकार करके वहाँ के निवासियों को बन्दी कर मदीने को ले गये। इन क़ैदियों में

हातिमताई की पुत्री भी थी। जब हजरत मुहम्मद को यह ज्ञात हुआ तब उन्होंने उसे उसी क्षण मुक्त कर दिया और शेष मनुष्यों को उचित दण्ड दिया। इस देशभक्त और जातिभक्त लड़की ने कहा कि यदि मेरे कबीले के और मनुष्य दास बनाकर रक्खे जावेंगे तो मैं ही स्वतन्त्र रह कर क्या करूँगी ? यदि इन्हें कतल करना है तो पहले मेरा गला शरीर से पृथक् किया जाय। यदि ये लोग गुलामी में रहें तो मैं भी पहिले गुलाम बनाई जाऊँ। मैं यह नहीं चाहती हूँ कि ये लोग कतल हों और मैं जीवित रहूँ या ये गुलाम रहें और मैं स्वतन्त्र बनूँ। मुहम्मद साहब ने उस लड़की के कहने पर सम्पूर्ण कबीले को प्राण-दान दिया। इस उदारता के वश में होकर उन सब ने इस्लाम धर्म को स्वीकार कर लिया।

अब हज का समय निकट आगया था। मुहम्मद साहब ने अपने मित्र हजरत अबूबकर सिद्दीक को हाजियों के काफिले के साथ हज की रीतियों को पूरा करने के लिये मक्के भेजा और कुछ आवश्यकीय कार्य्य के कारण वे मदीने ही में रहे। हजरत अली उनके साथ भेजे गये। उनसे कह दिया कि मक्के पहुँचते ही तुम इस बात की घोषणा कर देना कि आगामी वर्ष से मक्का ईश्वरके पूजकों का मुख्य नगर रहेगा। किसी मूर्त्ति-पूजक को वहां आने की आज्ञा न होगी। जब हज समाप्त होचुकी तब अली ने कुरबानी के दिन खड़े होकर यह घोषणा की कि आगामी वर्ष से किसी भी मूर्त्ति-पूजक को यहां आने

की आज्ञा नहीं है। और कोई मनुष्य नङ्गा होकर बैतुलहरम की परिक्रमा न कर सकेगा। चार मास के भीतर जो लोग मुसल्मान नहीं हैं इस पवित्र भूमि को छोड़ कर और कहीं चले जायें। इस मियाद के बाद किसी की भी बात न सुनी जायगी।

इस घोषणा के बाद श्री अबूबकर और अली अपने मुसल्मान साथियों को लेकर मदीने को चले गये। इस घोषणा से यह लाभ हुआ कि आगामी वर्ष में हज के पहले प्रायः सब अरब-निवासी मुसल्मान हो गये।

अब सन् १० हिजरी आरम्भ होगई। मुहम्मद साहब ने इस वर्ष केवल यही कार्य किया कि अरब के प्रत्येक क़बीले में अपना एक-एक उपदेशक इस्लामी शिक्षा देने के लिये भेज दिया। इन उपदेशकों ने इस्लाम के लिये दृढ़ परिश्रम किया। इन्होंने वह शक्ति उत्पन्न की जिससे सौ ही वर्ष में इस्लाम धर्म चारों ओर फैल गया। वह देश जो कई शताब्दियों से अन्धकार में निमग्न था और जिसमें हर प्रकार की बुराइयां विराजमान थीं और जहां पर मूर्त्ति-पूजा ने अपना अड्डा जमा लिया था, जहां विध्वंस की काली घटा छाई हुई थी, जिसका हाल सुनने से शरीर के रोम खड़े हो ...
ऐसे देश को धर्म-देश बना कर धर्म-प्रचार ...
धार्मिक नींव को दृढ़ करके हज़रत मुहम्मद ने ल...
करोड़ों मनुष्यों का जीवन धर्ममय बना दिया।

अरब के मरुस्थल में असभ्य और अपढ़ कबीलों द्वारा ही सम्पादित हुआ था। ईश्वर की इच्छा है कि वह धार्मिक वृत्ति के लोगों के द्वारा काम नहीं कराता। सब धर्मों के प्रचारक अपने समय में अति साधारण जीवन व्यतीत करते थे और अल्प योग्यता के मनुष्य ही पहिले-पहिल उनके अनुयायी हुए।

जब यह सब कार्य सम्पूर्ण हो चुका तब तो मुहम्मद साहब को यह विश्वास होने लगा कि मेरा काम अब समाप्त होना चाहता है। जिस कार्य के लिये ईश्वर ने मुझे यहां भेजा था वह पूर्ण हो गया। अब मेरा अन्तिम समय आगया है। उन्होंने अन्तिम हज करने का निश्चय किया। उनका काफिला मक्के की ओर रवाना हुआ। पाठको! क्या आप लोगों को यह मालूम है कि मुहम्मद साहब के साथ कितने मनुष्य थे? जिस अनाथ बालक मुहम्मद को दाई हलीमा भी पालने में हिचकिचाती थी और जिसे मक्के के मनुष्य ठहरने के लिये स्थान तक न देते थे और जिसे भागने के समय केवल दो ईमानदार साथियों ने आश्रय दिया था, आज वही मुहम्मद लाखों मनुष्यों को अपने झण्डे के नीचे लिये हुए मक्का शरीफ़ को हज को जा रहा है। आज उसके साथ एक लाख चौबीस हजार मनुष्य एक ही ईश्वर को मानने वाले और मुहम्मद पर प्राण न्यौछावर करने वाले खुले सिर और कफ़नी पहिने हुए, अमीरी ग़रीबी का भेदभाव त्यागे हुए स्वर्ग को भी लज्जित करने वाली शान के साथ समाधिकार के प्रेम में निमग्न अल्लाहो अकबर

डाला था। उसका बदला लेने के लिये एक सेना भेजी गई। परन्तु मुहम्मद साहब के स्वास्थ्य के बिगड़ जाने से यह सेना मार्ग से ही लौट आई।

इन्हीं दिनों में दो मनुष्यों ने जिनका नाम मुसैलमह और असवद अनसी था और जिन्हें मुसलमान इतिहासकार कज़्ज़ाब लिखते हैं पैग़म्बरी का दावा किया और अपने अपने क़बीलों में वैमनस्य फैला कर यमामा और यमन की राजधानी पर अधिकार कर लिया। इसमें से असवद को तो मुसलमानों ने शीघ्र ही पकड़ कर मार डाला; परन्तु मुसैलमह को मारने में कुछ समय लगा। मुहम्मद साहब की बीमारी के कारण वह बचा रहा। अन्त में वह भी मुसलमानों द्वारा मारा गया।

अब मुहम्मद साहब की आयु प्रायः ६३ वर्ष की हो गई थी। बुढ़ापे की निर्बलता और अतिशय परिश्रम के कारण उनके स्वास्थ्य में फ़र्क़ आगया था। अन्त में उन्हें ज्वर आया जिसने शीघ्र ही निमोनिया का रूप धारण करलिया। ऐसी दशा में भी वे पाँचों वक़्त नमाज़ के लिये मस्जिद में जाते और स्वयं इमामत कराते थे। आयशा का घर मस्जिद के बहुत पास था। वहीं पर आप बीमारी की दशा में रहते थे। वह सच्चे प्रेम के साथ आपकी सेवा करती थी। मृत्यु के तीन दिन पहले जब वे चल-फिर न सकते थे तब उन्होंने अपने चचेरे भाई अली और फ़ज़ल से प्रार्थना की कि वे उनको सहायता देकर मस्जिद तक ले जावें। उन्होंने इस आज्ञा को झट मान

लिया। परन्तु उनकी निर्बलता उत्तरोत्तर बढ़ती गई, इसलिये उन्होंने अपनी जगह पर अबूबकर को इमाम बनाया और स्वयं उनके पीछे खड़े होकर नमाज़ पढ़ी। नमाज़ से निवृत्त होकर आप बैठ गये। और मनुष्यों से कहा कि यदि मुझ से किसी भी मनुष्य को कुछ कष्ट पहुँचा हो तो मैं उसके लिये क्षमा-याचना के लिये उपस्थित हूँ। यदि तुम में से किसी का ऋण मेरे ऊपर है तो वह इसी समय ले ले। इस समय एक मनुष्य ने खड़े होकर प्रार्थना की कि मेरे तीन दरम आप पर हैं। वह क़र्ज़ अदा किया गया। इसके पश्चात् मुहम्मद साहब ने श्रोताओं को बहुत से उपदेश दिये। फिर वहाँ से वे घर चले गये। इसके बाद फिर न निकले। अब नित्यप्रति उनकी बीमारी और बेचैनी बढ़ती गई। आपने पानी का एक कटोरा भर कर अपने पास रख लिया था। पानी में हाथ डोब कर बार-बार मुँह पर मलते थे। अन्त में १२ रबीउल अव्वल अर्थात् ८ जून सन् ६३२ ई० को सोमवार के दिन ईश्वर का नाम लेते और 'बिलरफ़ीक़ इल आला', 'बिलरफ़ीक़ इलआला'—अर्थात् 'रफ़ीक़े आला के पास' 'रफ़ीक़े आला के पास' कहते हुए परलोक को सिधारे। जिस दिन आपका जन्म हुआ था, उसी दिन आपने अपना शरीर छोड़ा।